chapter · 4

चतुर्थ अध्याय

भगवंतराय खीची के मंडल के कवियों का वृत्त

(पृष्ठ १४६-१६५)

` भगवंतराय खीची के मंडल केकवियों ` का वृत्त

महाकवि देवदत्त ` देव

देव और भगवंतराय के सम्बंधों का अनुमान : हिन्दी साहित्य के अब तक के इतिहास लेखकों तथा अनुसंधानकर्ताओं ने देव और भगवंतराय के सम्बंध का उल्लेख नहीं किया । यहां उन सूत्रों का उल्लेख किया जा रहा है जिनसे हमें इन दोनों के बीच सम्बंध की संभावना प्रतीत हुई ।

१- देव और भगवंतराय समकालीन थे (देव का कविता काल संवत १७४६ से १८२४ वि० तक है और भगवंतराय का राज्यकाल संवंत १७७२ से १७६२ वि० है)।

२- देव आश्रय की खोज में आरम्भ से लेकर अन्त तक इधर उधर भटकते रहे और भगवंतराय कवियों के बीच अपनी गुण ग्राहकता और उदाराशयता की प्रसिद्धि के कारण `कल्पद्रुम` कहे जाते थे ।

३- इटावा और असोथर निकटस्थ प्रदेश हैं । सोलह वर्ष की लघुवय में जो व्यक्ति आजमशाह के समक्ष उपस्थित होने के लिए जा सकता है, वह अपने समीप के ही एक गुण-ग्राही राजा को कैसे न थहाता ?

४- देव के जितने ग्रंथ शोध द्वारा प्रकाश में लाये गये हैं, देव काव्य के सभी विद्वान उनकी संख्या प्राप्त ग्रंथों से अधिक ही स्वीकार करते हैं । अत: उन अप्राप्त ग्रंथों की शोध के साथ ही देव से सम्बंधित जानकारी भी विकसित होगी । जिस प्रकार देव के ग्रन्थ केवल उतने ही नहीं हैं जितने शोध द्वारा सामने आ चुके हैं, उसी प्रकार उनके आश्रय दाताओं विषयक जानकारी भी आज तक की ही खोज तक परिमित नहीं । इन्हीं संभावनाओं को ध्यान में रख कर किये गये प्रयत्न के परिणामस्वरूप ` जसिंह विनोद ` नामक रचना हमारे हाथ लगी ।

यह कृति महाकवि देव की रचना है । इसमें भगवंतराय के पूर्वजों का विशद् वर्णन है ।

अन्त:साक्ष्य के अतिरिक्त बहि:साक्ष्य भी उपलब्ध हैं कि भगवंतराय और देव के सम्बंध अत्यन्त घनिष्ठ थे।[१] प्राप्त ग्रन्थ का रचना काल संवंत १७७६ और प्रतिलिपिकाल संवंत १६१० है। जैसिंह भगवंतराय के तीन पुत्रों में सबसे छोटे थे। उनका देव से विशेष स्नेह था, इसलिए देव ने उनके नाम की प्रसिद्धि के लिए इस ग्रन्थ की रचना की थी। इसे स्वयं 'देव' ने ही लिख दिया है।

ग्रन्थ के प्रथम विनोद में कवि ने जयसिंह की ११ पीढ़ियों का इतिहास लिखा है। एक स्थान पर एक घटना-तिथि भी दी है। इस वर्णन की ऐतिहासिक उपादेयता और प्रामाणिकता का विचार इतिहास-निरूपण के प्रसंग में किया गया है। यहां हम देव और भगवंतराय के संबंधों के आधार पर देव की जीवनी पर प्रकाश डालने वाली बातों पर विचार करेंगे।

<u>ग्रन्थ का नाम जयसिंह पर आधारित है पर वास्तविक आश्रयदाता भगवंतराय ही थे :</u> देव ने अपने किसी भी आश्रयदाता का वर्णन इस विस्तार के साथ नहीं किया है, जैसा जैसिंह या कहें भगवंतराय का। इस वर्णन से स्पष्ट हो जाता है कि वे संवत वि० १७७६ के कुछ समय पहले से असोथर अथवा गाजीपुर में बंधकर निवास करने लगे थे तथा अपने को भगवंतराय की कुल परम्परा एवं पूर्वजों के वृत्त आदि से उन्होंने पूर्ण परिचित भी कर लिया था। उनका आश्रयदाता के परिवार के साथ घनिष्ठ और आत्मीयतापूर्ण संबंध स्थापित हो गया था। भगवंतराय के स्थान पर जैसिंह के नाम पर ग्रन्थ का नामकरण इसका प्रमाण है। जैसिंह भगवंतराय के तीन पुत्रों में सबसे छोटे थे। भगवंतराय की आयु का अनुमान उनकी जीवनी लिखते समय किया गया है, जिसके आधार पर देव के इस ग्रन्थ के रचना-काल

१- पिलानी के भगवान दास कम्पाउंडर के पास श्री भरत व्यास ने एक पुरानी हस्तलिखित पुस्तक देखी थी। उक्त पुस्तक में भगवंतराय के यहां के ११ प्रसिद्ध संगीतज्ञों में देव का नाम भी है। देव को यहां 'देवराज' कहा जाता था।

तक जैसिंह १५ वर्ष के लगभग माने जा सकते हैं। अतएव प्रश्न उठता है कि देव ने जैसिंह के नाम पर ही अपने ग्रन्थ का नाम क्यों रखा ? जबकि जैसिंह न राजा थे और न युवराज। इतना ही नहीं वे स्वतंत्र रूप से किसी कवि को संरक्षण प्रदान करने की स्थिति में भी संभवत: नहीं रहे होंगे। अत: इस शंका पर विचार करना आवश्यक हो जाता है। इस प्रश्न का उत्तर अनुमान के ही आधार पर दिया जा सकता है। असोथर में जयसिंह के नाम के सिवा उनके बारे में कुछ भी वृत्त ज्ञात नहीं है। शायद वे किसी युद्ध में अल्पायु में ही काल-कवलित हो गये थे। उनकी शादी व उनके वंश का भी कोई उल्लेख नहीं है। ऐसी दशा में उनके नाम की प्रसिद्धि के लिए देव का अपने ग्रन्थ का नामकरण करने का एक कारण यह सम्भव प्रतीत होता है कि शायद जैसिंह की काव्य-शिक्षा का भार भगवंतराय ने देव को ही सौंपा हो, जिसकी पूर्ति के लिए उन्होंने इस ग्रन्थ का प्रणयन किया। जैसिंह इस प्रकार के सम्पर्क के कारण देव को अधिक प्रिय भी हो गये होंगे एवं राजकुमार थे ही अत: उनके लिए प्रशंसापूर्ण कुछ उक्तियों में कवि क्यों कोताही करता ? दूसरी संभावना यह है कि जहां तक ज्ञात होता है भगवंतराय को कवियों को निज-प्रशस्ति के लिए उत्साहित करना प्रिय एवं रुचिकर नहीं था। इतने अधिक कवियों से उनका सम्पर्क था फिर भी उनके जीवनकाल में स्वयं भगवंतराय के नाम पर लिखे गये किसी ग्रन्थ का परिचय अभी तक नहीं मिलपाया। ऐसी स्थिति में देव ने यदि उनके पुत्र के नाम के बहाने ही उनकी कुछ प्रशस्ति करनी इष्ट की हो तो आश्चर्य क्या ? 'जैसिंह विनोद' में भगवंतराय के ही पौरुष इत्यादि के प्रसंगों को विशेषरूप से कवि ने सामने रखा है न कि स्वयं जयसिंह के। जयसिंह की उस अल्पवय में ऐसी प्रशंसा के लिए सामग्री भी क्या रही होगी। इस प्रकार हमें देव को भगवंतराय का ही आश्रित कवि मानना अधिक न्याय संगत एवं तर्कपूर्ण दिखता है। 'जैसिंह' का नाम होने से उनके आश्रित होने का भ्रम न किया जाय, इसी लिए यह स्पष्टीकरण आवश्यक समझा गया।

'जैसिंह विनोद' और महाकवि देव :

(देव के सम्बंध में प्रकाश डालने वाले 'जैसिंह विनोद' में प्राप्त होने वाले तथ्य)

देव ने अपने ग्रन्थों में अपने सम्बंध में विस्तार के साथ कहीं भी नहीं लिखा है।

जो कुछ लिखा , वह अल्प है । इस ग्रन्थ में भी उसी प्रवृत्ति का अनुसरण है । उन्होंने सभी कृतियों में रचना तिथि का उल्लेख भी अनिवार्य रूप से नहीं किया । परन्तु जहां भी उल्लेख किया है उससे देव साहित्य पर उनके अनुसंधान करने वालों में प्रमुख डा० नगेंद्र को निश्चित आधार मिल गया है, जिसके अनुसार उन्होंने देव की अन्य रचनाओं के रचना-काल निर्धारण का प्रयत्न किया है ।

प्रस्तुत ग्रन्थ में हमें देव के व्यक्तित्व एवं उनके ` जाति विलास ` के रचना काल पर प्रकाश डालने वाले कुछ आधार मिलते हैं, जो इस प्रकार हैं :

१- आश्रयदाता के वर्णन-विस्तार से कवि और आश्रयदाता के सम्बन्ध और घनिष्ठता तथा सम्बंध विछिन्न होने के कारणों का अनुमान ।

२- देव का आत्म-परिचय ।

३- ग्रन्थ की रचना-तिथि और वर्ण्य विषय नायिका भेद के आधार पर ` जाति विलास ` की रचना तिथि और उनकी देशव्यापिनी यात्रा की परीक्षा । तथा

४- यात्रा जन्य अनुभव के आधार पर नायिका-भेद वर्णन की परीक्षा ।

अब तक देव के जितने आश्रयदाताओं की चर्चा सामने आई है, उनमें भगवंतराय का ही व्यक्तित्व सबसे प्रभावशाली एवं समर्थ था । हम यह भी कह सकते हैं कि इनके साथ कवि के सम्बंध अन्यों की अपेक्षा अधिक गहरे एवं आत्मीयतापूर्ण थे । संभवत: देव ने असोथर-गाजीपुर में अन्य आश्रयदाताओं के यहां की अपेक्षा अधिक समय तक निवास भी किया होगा । देव ने अपने जिन अन्य आश्रयदाताओं के वर्णन जहां कहीं किये हैं, उनकी तुलना में भगवंतराय के प्रति जो वर्णन किया गया है वह कहीं विशद है, जिसके आधार पर नीचे लिखे निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं :

१- भगवंतराय के पूर्वजों का अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत वर्णन ।

२- भगवंतराय के स्थान पर उनके प्रिय पुत्र के नाम पर ग्रन्थ का नामकरण (इससे कवि के आश्रयदाता के साथ पारिवारिक सम्बंध प्रकट होते हैं)।

३- निज आश्रयदाता भगवंतराय की कीर्ति-कथन के लिए कवि ने जितना मनोयोग लगाया है उतना किसी अन्य आश्रयदाता के लिए नहीं । इसलिए स्वीकार करना पड़ता है कि देव भगवंतराय के आश्रय में कई वर्षों तक रहे ।

१७७६ वि० में जब कवि ने ग्रन्थ को पूरा किया था तब तक हुए कवि और आश्रयदाता के सम्बंध आकस्मिक न होकर घनिष्ठ और आत्मीय हो चुके थे । ये सम्बंध ग्रन्थ समाप्ति के शीघ्र बाद ही न टूट कर बाद को भी कुछ समय तक अवश्य बने रहे होंगे । यहां यह भी ध्यान में रखना है कि १७८३ वि० के पूर्व ही सम्बंधों का उच्छेदन भी हो गया था ।[१] सम्बंध टूटने के कारण कुछ गहरे रहे होंगे क्योंकि पुन: वे नहीं जुड़ सके । भोगीलाल की नाम प्रसिद्धि के लिए लिखे गए `रस विलास` में देव के हृदय से भोगीलाल के लिए जो कृतज्ञता उमड़ी है वह किसी गहरे संवेदनशील आघात के बाद आश्रय देने वाले के प्रति ही सम्भव हो सकती है । यहां निज हृदय के भाव प्रकाशन द्वारा देव ने न केवल राजाओं और दरबारों के व्यवहार के प्रति संताप प्रकट किया है वरन् वह विरक्ति-भाव,संसार से भी दूर हटने का संकेत करता है । `जैसिंह विनोद` में कहीं भी विगत जीवन की असफलताओं एवं विरसताओं का संकेत नहीं मिलता । वे अचानक `रस विलास` की पृष्ठ भूमि में इस प्रकार कैसे फूट पड़ी ? इस प्रश्न का यही उत्तर समझ में आता है कि देव जैसे भावुक संचैत्य कवि को कहीं अप्रत्याशित आघात लग चुका था; जहां तक प्रकट है इसके पूर्व का सम्बंध भगवंतराय से था अत: यहीं से वे वितृष्णा होकर हटे हों तो कुछ आश्चर्य नहीं । इसी समय उन्हें भोगीलाल का उदार आश्रय मिला अत: उनके प्रति उनका गद्गद् हृदय उमड़ पड़ा :

> `भूलिगयो भोज बलि विक्रम विसरि गये, जाके आगे और तन दौरत न दीदे हैं
> राजा, राइ,राने, उमराइ उनमाने, उनमाने निज गुन के गरब गिर बीदे हैं
> भोगीलाल भूप लख, पाखर लिवैया जिन, लाखन खरचि खरचि आखर खरीदे हैं ।[१]

यहां स्पष्ट रूप से कवि कहता भी है कि उसे भोगीलाल के यहां से अन्यत्र इतना अधिक आत्मीय सम्मान भोज, बलि और विक्रम के यहां भी नहीं मिला । अवश्य ही मानना

१- `रस विलास` में भोगीलाल के प्रति किये गये आत्म निवेदन से इसकी पुष्टि होती है ।

Smt. HANSA M... UNIVERSITY OF BARODA

पड़ता है कि कवि ने बड़े ही विख्यात जनों के प्रति कटाक्ष किया है । भगवंतराय और देव के सम्बंध ऐसे टूटे कि फिर नहीं बने । भगवंतराय की मृत्यु पर जब सम्पूर्ण अन्तर्वेद विह्वल हो उठा था तब भी देव की वाणी शायद मौन ही रही । प्रमाण मिलते हैं कि सुखदेव मिश्र जैसे कवि अपने क्षोभ को भूल गए थे पर देव का इस सम्बंध में लिखा अभी तक कुछ भी प्रकाश में नहीं आया जिससे उनके हृदय की प्रतिक्रिया का अनुमान लगाया जा सके ।

युग के दो प्रमुख व्यक्तित्वों के बीच आई इस खाई का क्या कारण था आज कुछ ज्ञात नहीं । अनुश्रुतियां भी नहीं मिलतीं । देव की प्रकृति आत्म केंद्री और संवेदनशील थी । भगवंतराय में दृढ़ता और कृत संकल्पता का प्राधान्य था, असंभव नहीं यदि कभी टकरा गये हों । अन्यथा देव जैसे अन्तरंग और सम्मानित कवि के साथ भगवंतराय के संबंधों का अन्तर नहीं आ सकता था ।

इस रचना द्वारा सामने आने वाला दूसरा प्रश्न है देव का अपना परिचय । उन्हीं के शब्दों में :

> नगर इटाए बास जिहि काश्यप वंश प्रमोद
>
> देव दत्त कवि कृत सरस श्री जैसिंह विनोद ,

इस दोहे में कवि ने अपने सम्बंध में दो बातें प्रकट की हैं : १- कवि का जन्म काश्यम वंश में हुआ है तथा २- कवि का निवासस्थान इटावा है । कवि के प्रपौत्र भोगीलाल ने भी लिखा है " काश्यप वंश द्विवेदी कुल " अत: कवि के सम्बंध में भोगीलाल द्वारा दिया गया परिचय प्रमाणित एवं पुष्ट हो जाता है । वे कान्यकुब्ज थे ।

देव इटावा के रहने वाले थे । भोगीलाल के कथन के आधार को डा० नगेन्द्र ने अपने ग्रन्थ " देव और उनकी कविता " में उद्धृत किया है जिसके अनुसार वे २६ वर्ष की अवस्था में कुसुमरा जाकर रहने लगे ।[१] किन्तु इस सम्बंध में स्वयं देव के कथन को प्रमाण मानना अधिक संगत है । दूसरे, देव कुसुमरा रहकर भी पितृभूमि के नाते अपने को इटावा वासी कहते रहे हों तो आश्चर्य क्या ? आज भी साधारणत: लोग पितृभूमि के आधार पर ही अपने को अमुक स्थान का रहने वाला बताते हैं ।

१- दे० कविता० पृ० २०

जैसिंह विनोद द्वारा सामने आने वाली महत्व की बात है ग्रन्थ की रचना-तिथि - संवत १७७६ वि० । इस कारण से दो महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार करना आवश्यक हो जाता है -(१) जाति विलास ग्रन्थ का रचना काल और (२) देव की देश-व्यापिनी यात्रा, जिसके अनुभवों के फलस्वरूप उन्होंने ' जाति विलास ' की रचना की ।

भगवंतराय और देव के सम्बंधों को देखते हुए इतना तो मान ही लेना पड़ेगा कि यदि देव ' भवानी विलास ' की रचना करके चर्खी दादरी में कई वर्षों तक रहे हैं[1] तो उन्हें कम से कम गाजीपुर असोथर में अवश्य ही तीन चार वर्ष तक रहने का समय मिला होगा । इसमें संवत १७७६ के पूर्व के दो-तीन और बाद के एक वर्ष की अवधि को समेटा जा सकता है । बाद की अवधि कम से कम माननी चाहिए क्योंकि इसी बीच मतभेद के कारण सम्बंध विच्छेद हुआ होगा । डॉ नगेन्द्र ने अनुमान से जाति विलास की रचना तिथि का आधार यह बताया है कि जाति विलास और ' रस विलास ' ग्रन्थ एक ही प्रकार की मानसिक पृष्ठभूमि में लिखे गए हैं ।[2] जाति विलास पहले लिखी गई कृति है । क्योंकि उसमें दी गई सामग्री में वह निखार नहीं है जो रस विलास में सुलभ है । यहां हम स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि डा० नगेन्द्र की तिथि थोड़ा बहुत इधर उधर खिसकाई जा सकती है केवल ध्यान में यह रखना है कि इन दोनों कृतियों का रचका-क्रम न टूटे । क्रम का ध्यान आवश्यक भी है क्योंकि यदि कवि ने एक विशेष विषय के वर्णन की एक निश्चित पद्धति अपने अन्तस् में बैठा ली थी तो उसका आभास प्रयत्न करने पर भी इन दोनों के मध्य काल में लिखी गई रचनाओं में अप्रकट नहीं हो सकता था । ' जैसिंह विनोद ' में नायिका भेद का वर्णन कियागया है किन्तु देश भेद का विस्तार यहां नहीं समाहित है । इसलिए हम कह सकते हैं कि निश्चय ही ' जाति विलास '

१- तुलना कीजिये, दे० कविता०पृ० ४६

२- तुलना कीजिये, दे० कविता०पृ० ५२

की रचना बाद में हुई है और वह १७८० के बाद ही कभी १७८३ के पूर्व समाप्त हुई होगी । यहां यह भी ध्यान में रखना है कि देव जैसे समर्थ प्रतिभा वाले कवि के लिए इस प्रकार के दो ग्रन्थों की रचना एक वर्ष के भीतर भी संभव थी । प्रमाण भी हैं कि १६ वर्ष की किशोर वय में ही 'भाव विलास' और 'अष्टयाम आदि' जैसे ग्रन्थ एक ही वर्ष के भीतर देव ने लिख डाले थे । अब तो उनकी वय बुद्धि सभी कुछ प्रौढ़ था अत: सम्भव है कि उन्होंने एक वर्ष के भीतर ही दो ग्रन्थ रच लिये हों ।

अब इस को प्रमाणित मान सकते हैं कि कवि देव वि० संवत् १७७९ के दो तीन वर्षों पूर्व से १७८० तक असोथर में रहे । इस समय के पश्चात उन्होंने 'जाति विलास' और 'रस विलास' की रचना की । पर यहां प्रश्न जाति विलास की रचना तिथि का अधिक महत्वपूर्ण नहीं है । प्रमुख प्रश्न है देव की देशव्यापिनी यात्रा का जिसके अनुभव के परिणाम स्वरूप इन दोनों ग्रन्थों में नायिका भेद का विस्तृत वर्णन किया गया है । यह तो संभव नहीं है कि देव सं० १७८० से १७८३ के बीच में कन्या कुमारी से लेकर कश्मीर और भूटान के प्रदेशों को घूम आए और उसी बीच अपनी रचना भी लिख कर समाप्त कर दी हो । यदि कहें असोथर में निवास के पूर्व उन्होंने ऐसी यात्रा सम्पन्न की थी तो वह भी सिद्ध नहीं किया जा सकता क्योंकि यदि उस यात्रा के अनुभव के परिणाम स्वरूप उन्हें जाति विलास जैसे ग्रन्थ का नायिक भेद प्रस्तुत करना था तो वह जैसिंह विनोद के नायिका-भेद में क्यों नहीं प्रकट हो सकता था ? परन्तु वैसा नहीं हो सका है । अत: यहां यही मानना होगा कि देव ने देशव्यापिनी यात्रा नहीं की थी । इस प्रमाण के अतिरिक्त देव की रचनाओं से अन्त: साक्ष्य भी हम अपने कथन के समर्थन में दे सकते हैं । जाति विलास में किये गये नायिका भेद के वर्णनों में ऐसी कोई गहराई नहीं दिखाई जा सकती जिसके लिए यह मानने को बाध्य होना पड़े कि वैसा वर्णन कर सकने के लिए बिना पूरा देश घूमे हुए ही किसी कवि ने लिए संभव नहीं था । देव ने 'जाति विलास' और 'रस विलास' में देश के विभिन्न अंचलों की नायिकाओं का वर्णन किया

है केवल उसके आधार पर उनकी यात्रा की बात प्रमाणित नहीं हो सकती । संभव है उन्हें अपनी रचनाओं की सामग्री संस्कृत साहित्य के नायिका भेद और कामशास्त्र में वर्णित नायिकभेद से या किसी पर्यटक साथी अथवा किसी अन्य सूत्र से मिली हो । वरन् कहा तो यह जाना चाहिए कि देव जैसी तलस्पर्शी प्रतिभा का कवि जब पल्लव ग्राही वर्णनों पर ही टिका रह जाता है तब उसकी प्रेरणा ऐसे ही साधारण संसर्गों से मानी जायगी । हम यह क्यों मानलें कि देव जैसा सहृदय संवेदनशील कवि पूरब से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तक देश की नदियों पर्वतों ग्रामों और वनों में छहों ऋतुओं को व्यतीत करता हुआ सौंदर्य की भूमियों में विचरा तो अवश्य पर उससे विशेष रूप से प्रभावित न हुआ । वास्तव में यह अप्रत्यक्ष रूप से देव की काव्य-प्रतिभा की ही अवहेलना होगी । देव की पकड़ अत्यन्त पैनी थी । संवेदनों को ग्रहण करके उन्हें सजीव वर्णनों में प्रस्तुत करने में उनकी प्रतिभा बेजोड़ है । देव की वह जागरूक प्रतिभा समस्त देश में प्रकृत जीवन के ग्रहण और चित्रण के लिए कुंठित और जड़ क्यों बनी रही ? फिर कवि की वाणी में यदि इस विपुल और संकुल रमणीयता का संस्कार व्यक्त हुआ तो वह केवल नायिक-भेद की ही डिब्बी में बन्द होकर । जातिविलास में, जितना सजीव वर्णन मछली बेचने वाली नायिका का देव ने किया है क्या वैसा ही वर्णन वे समुद्र तट के नारियल वृक्षों के बीच के रसमय जीवन का नहीं कर सकते थे ? सावन का जैसा प्रभावपूर्ण चित्र उन्होंने खींचा है क्या वैसे ही हृदय-ग्राही उत्सव पर्वों के चित्र अन्य प्रदेशों से वे नहीं निकाल सकते थे । देव के पाठक के गले के नीचे यह बात सरलता से नहीं उतर सकती । उनके " वृक्ष विलास " ग्रन्थ की कोई प्रति सम्प्रति प्राप्त नहीं है । परन्तु पं० कृष्ण बिहारी जी मिश्र ने उसे देखा था । उस ग्रन्थ का एक छंद उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक " देव और बिहारी " में उद्धृत भी किया है । देव की इस रचना के बारे में जब तक पूर्ण जानकारी न हो तब तक उसका विषय वस्तु का मात्र अनुमान करके ही कुछ टिप्पणी करना व्यर्थ होगा । यदि देव ने पूरे देश की वनस्पतियों और वृक्षों को देखा होगा तो उस की छाया इस पुस्तक में छिपी नहीं रह सकती, ऐसा मानना उचित होगा ।

देव की इस देश-व्यापिनी यात्रा के जिन कारणों का अनुमान किया गया है वे भी संतोषप्रद नहीं प्रतीत होते । कहा जाता है इसका उद्देश्य आश्रय की खोज तीर्थाटन अथवा परिभ्रमण इन तीनों में से कोई अथवा मिला जुला हो सकता है ।[१] यदि उन जैसा कवि कहीं भी बाहर गया होता तो उसे अवश्य ही कोई न कोई गुण ग्राही मिला होता अथवा उन्होंने ढूंढ निकाला होता जिसका उल्लेख भी उनकी रचनाओं में कहीं न कहीं तो अवश्य ही मिल गया होता । परन्तु इटावा से दो सौ मील के भीतर के ही प्रदेश में उनके सभी आश्रयदाताओं के ठिकाने मिल जाते हैं । चिन्तामणि और भूषण ने सिद्ध कर दिया है कि उस युग के हिन्दी कवि का आश्रय महाराष्ट्र तक था । वे घूमने वाले व्यक्ति थे और परिणाम स्वरूप उनकी रचनाओं में इस कथन के समर्थन में अनेक संकेत हैं, किन्तु देव की रचनाओं में प्राप्त सूचनाओं से देव को कहीं बाहर आश्रय मिला, इस की पुष्टि नहीं होती ।

धार्मिक यात्रा की बात भी लचर है । यदि धर्म की आस्था लेकर अपने शरीर को वे १५ वर्ष तक इस निष्ठा से कष्ट देते रहते कि बीच में प्राप्त होने वाले सारे लौकिक आकर्षणों को जो आश्रयदाताओं से अपेक्षित हैं, की उपेक्षा करते हुए एक निष्ठा-वंश उनको त्याग कर आगे बढ़ते जाते तो अवश्य ही उनकी परवर्ती रचनाओं में भक्ति और वैराग्य के स्वरों की प्रधानता मिलती न कि नायिका भेद की जैसा कि हुआ है । [illegible] भोगीलाल के प्रति जिस रूप से आत्म-क्षोभ का निवेदन उन्होंने किया है वह भी न हुआ होता । क्योंकि कवि को किसी से कुछ लेने देने का प्रयोजन ही नहीं था। `जाति विलास ' और ' रस विलास ' में उनकी भक्ति का पुष्टीकरण नहीं हो पाता है । यदि कहा जाय कि कवि ने अपने चित्त की नैसर्गिक सौंदर्य भावना के आग्रह वश ही यह कष्ट उठाया तो उसका भी कोई सशक्त या विश्वसनीय आधार नहीं है । देव के तथाकथित यात्रा-काल (अर्थात संवत् १७६५ से १७८३) में जैसा ऊपर विचार किया गया है तीन काव्य रचनाओं के किये जाने का साक्ष्य मिलता है । यदि इन

१- तुलना कीजिये, दे० कविता० पृ० २८

रचनाओं को देव के देश-व्यापी यात्राकाल या उसके तुरन्त बाद की माना जाय तो इसे प्रमाणित कैसे करेंगे ? इन तीनों रचनाओं में देव की प्राकृतिक सौंदर्य के प्रति विशिष्ट रुझान का संतोष जनक प्रमाण नहीं मिलता । वैसे देव ने ग्राम सौंदर्य या प्रकृति का जो थोड़ा-सा वर्णन किया है वह उनके गहरे सौंदर्य-बोध एवं सुरुचि का परिचायक है । किन्तु यह बोध उनकी काव्य-प्रतिभा में अन्तर्निहित है । इन रचनाओं में मध्य देश से बाहर के स्थलों के प्राकृतिक सौन्दर्य या जीवन-वैशिष्ट्य के बारे में कोई निर्देश नहीं है । उनके वर्णन पर कोई वाह्य प्रभाव भी नहीं दिखाई देता ।

महाकवि देव की जीवनी

देव के सम्बन्ध में सेंगर जी से लेकर अब तक के सभी इतिहास लेखकों ने बड़ी ही सतर्कता से अपनी लेखनी चलाई है । मिश्र बंधु डा० श्याम सुन्दर दास, आचार्य शुक्ल एवं पं० कृष्ण बिहारी प्रभृति विद्वानों की समर्थ लेखनियों ने महाकवि देव की जीवनी और उनके काव्य पर प्रकाशडाला है । इनके अतिरिक्त भी श्री गोकुल चन्द दीक्षित एवं डा० जानकी नाथ सिंह मनोज आदि के कार्यों को भी इस दिशा में कभी नहीं भुलाया जा सकता । श्री दीक्षित जी की देन, अव्यवस्थित भले ही हो, परन्तु देव सम्बंधी अनुसंधान के अगले चरण के लिए बहुत ही उपादेय सिद्ध हुई है ।[१] अन्त में देव संबंधी अपने से पूर्ववर्ती समस्त सामग्री का वैज्ञानिक परीक्षण करके डा० नगेन्द्र ने देव के अनुसंधान कार्य को एक निश्चित स्वरूप प्रदान किया है । यह सामग्री डा० नगेन्द्र के शोधग्रन्थ देव और उनकी कविता तथा उनके द्वारा सम्पादित हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास भाग ६ में उपलब्ध है । यहां ` जैसिंह विनोद ` से प्राप्त देव के जीवन सम्बंधी सूचनाओं की कसौटी पर उपर्युक्त सामग्री को कसेंगे और उसके प्रकाश में उनके उस जीवन वृत्त को प्रस्तुत करेंगे जो इस ग्रन्थ से प्रकाश में आता है ।

१- तुलना कीजिये, दे० कविता० पृ० १०

महाकवि देव सनाढ्य ब्राह्मण न होकर काश्यप गोत्रीय कान्यकुब्ज थे।[1] उनके पिता का नाम बिहारी लाल दुबे और जन्मभूमि इटावा थी।[2] इसी इटावा नगर के लालपुरा मोहल्ले में उनका घर था जिसके अवशेष आज भी विद्यमान हैं। उनकी जन्म-तिथि संवत १७३० वि० थी। जन्म-तिथि का निश्चय कवि के ही शब्दों में प्रमाण बद्ध है।[3] कम से कम अपने आरम्भिक जीवन के ४६ वर्षों तक देव इटावा में ही निवास करते रहे। संभव है शेष जीवन को उन्होंने कुसुमरा में बिताया हो या इटावा और कुसुमरा दोनों ही स्थानों में। इटावा छोड़कर देव कुसुमरा के अधिवासी बन गए हों यह सम्भावना हमारी दृष्टि में अत्यन्त क्षीण है। एक पुत्र के वहां रहने के कारण देव कुसमरा आते जाते रहे हों या कभी लम्बे समय तक भी रह जाते रहे हों, यह दूसरी बात है। जब एक पुत्र पितृ भूमि में रह रहा है और दूसरा अन्यत्र चला गया है तो पिता भी पूर्णरूप से अन्यत्र ही जाकर टिक जाय यह समझ में नहीं आता। यदि कुसुमरा जाने वाले देव के पुत्र की वहीं ससुराल रही हो तब तो देव का वहां जाकर स्थायी रूप से निवास करना और भी क्लिष्ट कल्पना होगी। एक संभावना यह है कि कुसुमरा किसी के यहां से देव को भेंट स्वरूप मिला हो, ऐसी स्थिति में वह गांव देव के नाम से ही प्रसिद्ध रहा होगा। बाद को उनके वंशजों ने अपने गौरव के लिए उसे ही देव का बाद का निवासस्थान घोषित कर दिया हो, यह बात भी संभावना से परे नहीं।

उन्हें आश्रय की खोज में दिल्ली से लेकर इलाहाबाद के बीच तक के प्रदेशमें कई जगहों में अपनी भाग्य परीक्षा करनी पड़ी थी। अवध और ब्रज दोनों ही प्रदेशों में वे रहे। इसी समस्त प्रदेश के भीतर उनके सभी आश्रयदाताओं के ठिकाने आते हैं, जैसे आजमशाह(दिल्ली) भवानी दत्त वैश्य(चर्खीदादरी)(बुलन्दशहर) कुशलसिंह(फफूंद इटावा) इन आश्रयदाताओं के यहां रहने के पश्चात् देव गाजीपुर असोथर के भगवंतराय के यहां पहुंचे।

१- तुलना कीजिये, हि० इतिहास पृ० ३२०

२- दे० कविता० पृ० १८

३- दे० कविता० पृ० १६

यहां वे काफी समय तक बड़े सम्मान के साथ रहे । भगवंतराय स्वयं साहित्यकार और संगीतज्ञ तथा इन कलाओं के मर्मज्ञ थे । उनके दरबार में साहित्यकारों और संगीतज्ञों का जमघट रहता था । इस सम्पर्क के कारण देव की प्रतिभा में अवश्य ही निखार आया होगा । भगवंतराय के यहां रहकर उन्होंने संगीत को मांजा होगा । ऐसा लगता है कि यहीं उन्होंने अनेक श्रेष्ठ ध्रुपदों की रचना की एवं गान विधा में निपुणता प्राप्त की । अपनी स्वाभाविक प्रतिभा के कारण देवकी प्रतिष्ठा यहां बढ़ी और उन्हें `देवराज` की उपाधि मिली ।[१] भगवंतराय राम के भक्त थे । इसका भी उनके ऊपर प्रभाव पड़ा तथा उन्होंने रामायण के कथानक को लेकर भी अनेक छन्दों एवं ध्रुपदों की रचना यहां की थी ।[२] यहां देव निश्चितरूप से कितनी अवधि तक रहे यह तो कुछ नहीं कहा जा सकता पर संभावना यह है कि इतनी लम्बी अवधि तक वे अन्य किसी आश्रयदाता के यहां शायद ही रहे होंगे । यहीं देव और भगवंतराय के आपसी सम्बंधों में शायद किसी कारण फांस पड़ गई और देव उनका आश्रयत्याग कर चले गए । देव जैसे संचेत्य और स्वाभिमानी प्रकृति के कवि के लिए ऐसा कर देना अस्वाभाविक व असामान्य न था ।

भगवंतराय के यहां रहकर उन्होंने `जैसिंह विनोद` की रचना की थी । ऐसा लगता है यहां रहकर उन्होंने और भी रचनाएं की होंगी किन्तु अभी तक इसका प्रमाण नहीं मिला । यह कथन मात्र अनुमान है । भगवंतराय और देव के सम्बन्ध निश्चित होने तथा जैसिंह विनोद की उपलब्धि से उनकी देश व्यापिनी दीर्घ यात्रा निराधार सिद्ध होती है । इसका विवेचन हम कर चुके हैं ।

यहां से हटने पर देव को भोगीलाल का संरक्षण मिला । भोगीलाल के यहां देव को पर्याप्त धन और सम्मान प्राप्त हुआ । भोगीलाल के यहां से वे डौंडिया खेरे के उद्योत

१- जैसा कि कहा भी जा चुका है कि पिलानी के भगवानदास कम्पाउंडर के यहां प्राप्त हस्तलिखित पुस्तक में लिखा है कि भगवंतराय के यहां रहने वाले कवि देवराज सर्वश्रेष्ठ गायक थे । इसके अतिरिक्त स्वयं भगवंतराय अच्छे संगीतज्ञ थे अत: उनके संसर्ग में देव के संगीत-ज्ञान का परिमार्जन संभावना युक्त है ।

२- जैसिंह विनोद में रामायण के कथानकों पर आधारित कुछ छंद इसका संकेत करते हैं ।

सिंह के यहां पहुंचे । उद्योतसिंह के यहां से एक बार वे पुन: दिल्ली की ओर मुड़े जहां सुजानमणि की छत्रछाया मिली । सुजान मणि के यहां से वापस आने के बाद से वे बंधकर किसी के यहां नहीं रहे । डा० नगेन्द्र का अनुमान है कि वे कभी कभी अलवर भरतपुर के राजाओं के यहां आते जाते रहे होंगे । उनके अंतिम आश्रयदाता पिहानी के अकबर अली खां थे । अकबर अली के साथ हुए उनके सम्बंध की तिथि पर विचार करके देव की मृत्यु तिथि निश्चितकरने का आधार ग्रहण कियागया है । इस सम्बंध में ` जैसिंह विनोद ` से कुछ संकेत मिल जाते हैं, जिसके अनुसार हम अपने अनुमान को यहां प्रकट कर सकते हैं । अकबर अली का राज्यारोहण १८२४ वि० है । इस प्रकार देव का जीवन काल इस समय तक तो निश्चित हो ही जाता है । परन्तु निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि कवि अपने ग्रन्थ को अकबर अली के सिंहासनारोहण के साथ ही तैयार करके ले गया होगा । देव जैसेवरिष्ठ आयु के अत्यंत प्रसिद्ध और सम्मानित कवि से यह अपेक्षा करना संगत नहीं प्रतीत होती । पुन: यदि मान लिया जाय कि अकबर अली और देव के पूर्व सम्बंध थे अथवा अकबर अली के पिता से उनके सम्बंध थे तो यह बात स्वीकार की जा सकती है । यदि हम दूसरी संभावना को विश्वसनीय मानते हैं तो यह टिप्पणी निराधार न होगी कि अकबर अली के सिंहासनरोहण के पूर्व ही सुख सागर तरंग उन्हें उसी प्रशस्ति कथन के साथ समर्पित किया जा सकता था । देव के ही अन्य ग्रन्थों से इसके समर्थन में प्रमाण मिल जाते हैं । आजमशाह की बात जाने दीजिए भवानी दत्त ही कौन से राजा थे ? वे तो राजा के पुत्र भी नहीं भतीजे थे । परन्तु उनके प्रति भी अपनी श्रद्धा निवेदित करने या उनके यशो विस्तार में क्या कवि ने कुछ कोताही की है ? जैसिंह अत्यन्त लघुवय के थे जब कवि ने उनके नाम पर अपने ग्रन्थ को प्रचलित किया । इसी प्रकार उद्योत सिंह भी उस समय[१] युवराज ही ठहरते हैं । जब कवि ने उन्हें प्रेम चन्द्रिका समर्पित की थी। इन तथ्यों के समक्ष होने पर यही मानना उचित होगा कि ` सुख सागर तरंग ` का सम्पादन १८२४ वि० में ही पूरा हुआ, निर्विवाद नहीं । अत:

१- देव और उनकी कविता के पृ० ५६ में इसका रचनाकाल संवत् १७६० के आसपास अनुमानित किया गया है । उन्नाव गजेटियर के अनुसार ई० १७४०, संवत १७६७ में मर्दन सिंह ने अपने तीन पुत्रों में अपना राज्य बांटा था । इस प्रकार प्रेमचन्द्रिका के रचनाकाल तक उद्योत सिंह युवराज ही थे ।

हम देव की आयु निर्धारित करने में अभी संदिग्ध हैं । संभव है आगे होने वाले अनुसंधान इस प्रसंग को अधिक प्रामाणिकता के साथ सामने उपस्थित करें ।

देव का व्यक्तित्व

देव अत्यंत प्रतिभावान कवि थे । युग की काव्य प्रवृत्तियों को उनके काव्य में पूरा प्रतिनिधित्व मिला है । श्रृंगार भक्ति एवं वैराग्य की धाराओं ने उनके संवेदनशील मस्तिष्क को बहुत अधिक प्रभावित किया है । इन प्रवृत्तियों ने उनके व्यक्तित्व को बहुमुखी तथा उनके काव्य के लिए विस्तृत भाव-भूमि प्रस्तुत की है।

भावुक हृदय की संवेदन-शीलता भी उनके भीतर भरपूर थी । जीवन-संघर्षों में वे १६ वर्ष की वय से ही बड़े आत्म विश्वास के साथ प्रवृत्त हो गए थे । इससे प्रकट है कि अपनी प्रतिभा और अपनी श्रेष्ठता को वे स्वयं भी पहिचानते थे । एक ओर अपनी दृष्टि में उनकी ये समस्त विशेषतायें स्पष्ट थीं दूसरी ओर लोक-जीवन की असफलतायें, इसलिए स्वभाव प्रतिक्रियावादी बन गया था । वे व्यावहारिककभी नहीं बन सके । फलस्वरूप अपने वर्तमान और भविष्य को कहीं भी आश्वस्त नहीं कर पाये । अत: प्रकट है कि उनका जीवन भी करूण बना रहा । परन्तु इस संघर्ष में उनकी प्रतिभा संवरती और निखरती गई । साथ ही साथ एकान्त प्रियता एवं सामाजिक निस्संगता भी प्रबल होती रही । देव किसी के बनकर न रह सके और न किसी को अपना बना सके । न तो वे किसी राज्याश्रय में टिक सके और न किसी शिष्य को अपना सके । कारण यही है कि देव जीवन में अत्यधिक आत्म केंद्रित हो गए प्रतीत होते हैं । वे स्वाभिमानी और अक्खड़ तथा भावुक थे । जिस पर प्रसन्न हैं उसे बहुत ही महत्व दे डाला और भरपूर बखान किया उसका । जब खटक गई तो फिर वे किसी की सुनने वाले न थे ।

वास्तव में देव रीति और भक्ति धारा के कवियों के बीच अवस्थित थे । वे न तो दरबार से दूर थे और न दरबारी वातावरण में घुले मिले । वे सर्वोपरि अपने भावुक व्यक्तित्व को ही स्थान देते थे और इसी की आवाज पर अपना व्यवहार स्थिर करते थे । उन्हें किसी का हस्तक्षेप कभी प्रिय न लगा होगा । खिन्न होने पर या कहें

इस व्यक्तित्व के बाधित होने पर वे राम का स्मरण करते तथा वैराग्य की शरण लेते थे। कुछ समय बाद ये सारे गत्यवरोध भूल कर पुन: उसी जीवन में प्रवृत्त हो जाते थे। उनकी रचनाओं से इन सबका यथेष्ट परिचय-निर्देशन मिल जाता है। डा० नगेन्द्र जी का मत ठीक है कि एक की प्रतिक्रिया से दूसरे का अविर्भाव हो जाता था। वे प्रकृत्या: एक कवि थे और एक सच्चे कवि की भावुकता में ही वे जीवन को जिये भी।

अनुश्रुतियां : उनके जीवन से सम्बंधित अनुश्रुतियां एक ओर उनके महत्व, उनकी प्रतिभा और उनकी विद्वता की सूचना देती हैं। दूसरी ओर उनके स्वाभिमानी अक्खड़ और अव्यावहारिक स्वभाव को भी प्रकट करती हैं। घटनाओं की सत्यता पर भले ही संदेह किया जाय किन्तु इनमें अन्तर्निहित और व्यंजित सत्य कभी भी अस्वीकृत नहीं किया जा सकता। यहां यह भी कह देना उचित होगा कि साधारण जनता उन्हें कितना सिद्ध और महान मानती थी। इस धारणा की पुष्टि उनके नाम के साथ प्रचलित अनुश्रुतियों से हो जाती है।

सदानंद

(कवि का परिचय)

'रासा भगवंतसिंह का' के रचियता सदानंद भी भगवंतराय के समकालीन और उनके आश्रित कवि थे। उनकी जीवनी का प्रामाणिक साहित्य उपलब्ध नहीं। ग्रियर्सन ने इनका उल्लेख भर किया है। मिश्रबंधु विनोद में सदानंद नाम के जिस कवि का उल्लेख है वह भी संभवत: आलोच्य कवि के सम्बंध में ही है। इनके बारे में वहां निम्न सूचना है :

"इस कविके केवल तीन छंद हमने देखे हैं। इनके जीवन चरित्र का हमें कुछ भी वृत्तांत ज्ञात न हो सका, पर इसका समय संवत् १६८५ के आस पास है।"[१] बाबू ब्रज रत्न

१- मि० भाग-२, पृ० ४०३

दास ने सदानंद कृत ` रासा भगवंतसिंह का ` नामक रचना का सम्पादन करके उसे ना०प्र० सभा की पत्रिका में छपवाया है । उसमें भी उन्होंने कवि के जीवन चरित्र के सम्बन्ध में कोई विशेष सूचना नहीं दी, सिवाय इसके कि वह अपने ग्रन्थ नायक भगवंत राय का समकालीन था । बाह्य प्रमाणों का सर्वथा अभाव है परन्तु इस ग्रन्थ में वर्णित घटना ऐतिहासिक है जो सं० १७६२ में घटित हुई थी और कविने रचना काल भी लिख दिया है अत: कवि का कविताकाल तो स्वयं कविके मुख से ही निश्चित हो जाता है । सदानंद अपने समय के उच्चकोटि के कवि थे । भगवंतराय रासा इसका प्रमाण है । कवि के रूप में उन्हें ख्याति दिलाने में यह ग्रन्थ पर्याप्त है । सूदन ने अपने ग्रन्थ सुजान चरित् में प्रसिद्ध कवियों की तालिका में सदानंद नाम के जिस कवि का उल्लेख किया है, वे यही होंगे । इस प्रकार ये भगवंतराय के समकालीन सिद्ध होते हैं । स्वयं अपनी रचना से भी इनका और भगवंतराय का अत्यन्त घनिष्ठ सम्बंध प्रकट होता है । कहा भी जाता है कि ये भगवंतराय के ही यहां रहते थे और उनके दिवंगत होने के पश्चात असोथर से गोंडा चले गये । गोंडा में उन्होंने जैमिनी ` पुराणनायक ` ग्रन्थ की रचना की है जिसकी एक प्रति डा० भगवतीसिंह, हिन्दी विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय के पास है । परन्तु हमें वह पुस्तक देखने को नहीं मिल सकी । इनकी भाषा-शैली अत्यंत प्रौढ़ एवं परिमार्जित है । संभवत: रीतिकाल के संग्रहों में जिस सदानंद के छंद संगृहीत हैं वे यही हैं । इन्हीं के समकालीन एक दूसरे सदानंद कवि का भी पता चलता है जिन्होंने ` पहुपावती ` नामक प्रेमाख्यानक ग्रन्थ की रचना की है । इसका रचना काल संवत् १७८३ के आसपास है । परंतु सदानंद नाम की एकता होने पर भी दोनों के एक होने की संभावना नहीं है । ` पुहुपावती ` के कवि मुसलमान थे जिनका वास्तविक नाम हुसैन अली था । वे ` पुहुपावती ` की रचना करने के पूर्व हिजरी ११३८ में मथुरा में वास करने लग गये थे । इन्होंने अपना परिचय भी दे दिया है :

' कुतुबसिताब सुविधि दयौ, सब बिधि दई बड़ाई
दरसनि आस भई सफल, सुबस बसे ब्रज आई
हुसेन अली कवि सैयद जाती करी कथा विनवै सब भांती
बास कथा कहौ हरि गाऊं, धरो सदानंद कवि निज नाऊं '[1]

परन्तु रासाकार सदानंद इनसे भिन्न थे। दोनों कवियों की भाषा-शैली में भी अन्तर है। रासा का काव्य सौष्ठव ' पुहुपावती ' से कहीं श्रेष्ठ है।

अब प्रश्न यह उठता है कि जिन सदानंद कवि के छंद रीतिकाल के संग्रह ग्रन्थों में मिलते हैं तथा मिश्र बंधु विनोद में मिश्र बंधुओं ने जिनका उल्लेख किया है वे कौन थे? इस प्रश्न के उत्तर में उदाहृत छन्दों की काव्यगत सुष्ठुता के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वे भगवंतराय के संरक्षण में ही रहने वाले सदानंद होंगे। इस दृष्टि से मिश्रबंधु विनोद में सदानंद का जो समय निर्धारित किया गया है वह अशुद्ध जान पड़ता है। मिश्र बंधुओं ने बिना किसी आधार के अनुमान कर लिया है, यह स्वयं उन्हीं के शब्दों से ध्वनित हो जाता है।

परिचय

भगवंतराय रासा के अनुशीलन से प्रकट होता है कि कवि का ग्रन्थ नायक भगवंत राय के साथ घनिष्ठ और आत्मीय सम्बंध था। उक्त कृति में वर्णित युद्ध के समय स्वयं घटनास्थल पर उपस्थित होकर अपने नायक के शौर्य को इन्होंने अपनी आंखों से देखा था। इन्होंने अपने संरक्षक से उऋण होने के लिए उसकी कीर्ति को काव्यबद्ध कर दिया और अपने इस प्रयास में उन्हें अद्भुत सफलता मिली। यहां से निराश्रित होकर कहा जाता है कि ये गोंडा के विसेन राजा के संरक्षण में चले गए जहां पहुंचकर इन्होंने ' जैमिनी पुराण ' नामक ग्रन्थ की रचना की। इसके अतिरिक्त इनका कुछ भी वृत्त ज्ञात नहीं हो सका है।

१- गोपाल चन्द्र सिन्हा, रिटायर्ड जज-६ फैजाबाद रोड, लखनऊ के पास प्राप्त प्रति के आधार पर।

गोपाल

(कवि का परिचय)

कवि गोपाल की ' भगवंत विरुदावली ' नामक रचना उपलब्ध है । इनके सम्बंध में हिन्दी साहित्य के इतिहासों में कोई सूचना नहीं है । प्रस्तुत कृति में कवि ने अपने काव्य-नायक भगवंतराय के प्रति अगाध श्रद्धा व्यक्त करते हुए उनके इतिहास-प्रसिद्ध अंतिम युद्ध का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है । इस की पृष्ठभूमि में कवि ने नायक की अन्य महत्वपूर्ण पिछली विजयों का भी संकेत कर दिया है । इस प्रकार गोपाल की इस रचना के अवलोकन से निश्चय हो जाता है कि वे भगवंतराय से कभी किसी प्रकार सम्बंधित थे । कवि ने एक स्थान पर लिखा भी है :

बाइस समर भये गोपाल, इतनै भाषत दीन दयाल '[1]

' इतनै भाषत दीन दयाल ' पद से यह भी ज्ञात होता है कि इस कृति को कवि ने अपने किसी आश्रयदाता के कहने से रचा था परन्तु कहीं भी आश्रयदाता का परिचय अथवा उल्लेख कृति के भीतर नहीं मिलता । स्वयं कवि ने भी अपने सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा है । पर ऐसा लगता है कि यह कृति भगवंतराय के निधन के कुछ ही दिनों बाद लिखी गई होगी ।[2]

भगवंतराय से सम्बंधित गोपाल कवि के सम्बंध में फतेहपुर जिले के नियोजन अधिकारी कैप्टेन शूरवीर सिंह ने सन् १९५५ ई० में जिले से निकलने वाले ' पंचदूत ' पाक्षिक में इनका परिचय लिखा था । उसका आधार उसी जिले के जमुना-तट पर स्थित एकडला ग्राम से मिली सूचना थी । एकडला के अग्निहोत्री ब्राह्मण इन गोपाल कवि को अपना पूर्वज बताते हैं । इस समय स्थानीय अनुश्रुति के अनुसार गोपाल की ८वीं या ९वीं पुश्त चल रही

१- असोथर में ' भगवंत विरुदावली ' की जो हस्तलिखित प्रति हमें देखने को मिली थी उसके पार्श्व में लिपिकार के ही हाथों से यह पंक्ति भी हमें देखने को मिली थी । इनकी एक और पंक्ति भगवंतराय के सम्बंध में लोगों को स्मरण है :' बिनु गोपाल को गाई है, विरुदावलि भगवंत '

२- बहुत सम्भव है भगवंतराय की मृत्यु के बाद कवि उनके किसी मित्र राजा के यहां चला गया हो जिसके कहने से इस ग्रन्थ की रचना की ।

है । अत: इनका समय लगभग भगवंतराय के समय के ही आसपास है । कैप्टैन साहब के बाद हमने भी नरौली ग्राम निवासी श्री जयगोपाल मिश्र के माध्यम से कैप्टैन साहब के विवरण की परीक्षा कराई जो सर्वथा पुष्ट हुई है ।

इस प्रकार हम अपने आलोच्य गोपाल कवि का परिचय इस प्रकार दे सकते हैं - इन गोपाल कवि का जन्म स्थान फतेहपुर जिले में स्थित एकडूला ग्राम है । ये अग्निहोत्री ब्राह्मण थे । इनका समय भगवंतराय के ही समय के लगभग था । इन्होंने विरुदावली के अतिरिक्त भी भगवंतराय के सम्बन्ध में कुछ स्फुट रचनायें लिखी होंगी जो आज उपलब्ध नहीं होती । कुछ यत्र-तत्र की पंक्तियां अवश्य उपलब्ध हैं । इनका कविताकाल संवत् १८०० के आसपास माना जा सकता है ।

एक प्रश्न यहां और विचारणीय है । मिश्रबंधु विनोद एवं खोज रिपोर्टों में अनेक गोपाल नाम के कवियों के उल्लेख हैं । उनमें से ये कौन हैं ? परन्तु इस प्रश्न का उत्तर बहुत कठिन है । जब तक सभी गोपाल नामधारी कवियों की रचनायें अलग करके उनका सम्यक् अध्ययन न किया जाय; निश्चय पूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता । हस्तलिखित प्रतियां और उनके बिखरी हुई होने के कारण हम यह कार्य नहीं कर सके । फिर इस नाम के सभी कवि साधारण प्रतिभा के हैं, अत: अन्त:साक्ष्य और शैली तथा भाषा के आधार पर उनको अलग करना भी कठिन होगा ।

मुहम्मद

(कवि का परिचय)

मुहम्मद कवि का नाम सबसे पहले कैप्टैन शूरवीर सिंह द्वारा फतेहपुर से प्रकाशित ` पंचदूत ` पाक्षिक में सन् १९५५ ई० में प्रकाशित हुआ था । कवि की एक मात्र रचना ` भगवंतराय खीची का जंगनामा ` उपलब्ध है । इसी में कवि ने अपना परिचय व रचनाकाल भी निबद्ध कर दिया है । इसके अनुसार कवि जाति का मुसलमान और गंगा के किनारे स्थित मलौदी ग्राम का निवासी था । यह मलौदी कोड़ा जहानाबाद से दश कोस की दूरी पर जाजमऊ के निकट स्थित था ।[१] कवि के ही शब्द हैं :

१- हमने इस ग्राम का पता लगवाने का प्रयत्न किया पर उसका हमें कोई पता न चला । संभव है गांव कटकर गंगा के गर्भ में चला गया हो या खेर हो गया हो ।

` मलौड़ी वतन है मेरा, वहां से जाजमऊ नेरा
कोड़ा से कोस दस डेरा, नियट गंगा किनारा है `

कवि भगवंतराय का समकालीन था । ग्रन्थ की रचना-तिथि एवं शाहे वक्त की बन्दगी से यह पुष्ट भी होता है ।

` चहलसी चहल सन रहते मुहम्मद शाह के कहते
उसी के राज में रहते वहीं साहेब हमारा है`

इससे स्पष्ट है कि कवि मुहम्मद शाह का समकालीन था और ग्रन्थ की रचना-तिथि हिजरी ११६० है । कवि के वर्णन से ऐसा लगता है कि वह अपने ग्रन्थ-नायक से बहुत अधिक प्रभावित एवं सम्बद्ध भी था । उसने स्वान्त: सुखाय यह रचना की थी -

` ये कर डारा है मन माना
मुहम्मद खां सचारा है `

पूरी रचना पढ़ने पर ऐसा प्रतीत होता है कि इस कवि की सहानुभूति भगवंतराय के लिए थी । भगवंतराय की विजय से उसने प्रजारन्जन की प्रसन्नता को अभिव्यक्त किया है । स्वयं कवि भी उसे अपने हृदय में अनुभव करता प्रतीत होता है । उसकी ये पंक्तियां इस पर प्रकाश डालती हैं :

` विजय भगवंत ने पाई, चिठी सब परगने धाई
मिटा रैयत का सब खटका, कहै भगवंत का करखा
हुई खिलकत सभी राजो, तुम्हीं रणखंभ गाड़ा है `

` जंगनामा० `

इतना ही नहीं भगवंतराय के निधन काल पर भी उसकी सहानुभूति प्रकट होती है - ` सभी हा-हा पुकारा है ` पद में इसकी व्यंजना है । वह अपने नायक को एक महान् आत्मा भी मानता था क्योंकि उन्हें स्वर्ग ले जाने के लिए स्वयं ईश्वर के दूत आये थे - ` उसी दम पारषद आये ` । इस प्रकार यह कवि भगवंतराय से उपकृत एवं निकट संबंधित जान पड़ता है ।

१- चहल ४० सी ३० = १२००- चहल- ४० = ११६० हिजरी

शंभुनाथ मिश्र

(कवि का परिचय)

हिन्दी साहित्य के इतिहास में शंभु अथवा ` शंभुनाथ ` नाम के अनेककवि मिलते हैं । शिवसिंह सेंगर जी ने ही अपने ग्रन्थ में इस नाम के पांच कवियों की सूचना दी है । यह भी हो सकता है ` शंभुनाथ ` नाम के कवि कभी कभी अपने नाम के ` नाथ ` शब्द को ही अपनी कविताओं में छाप छोड़ देते हों । इस प्रकार इनकी संख्या और अधिक हो सकती है । क्योंकि ` नाथ ` छाप की भी अनेक रचनायें हैं । स्वयं ` नाथ ` नाम के भी अनेक कवि हो गये हैं । अत: ` शंभुनाथ ` जो भगवंतराय से सम्बंधित थे उनका ठीक ठीक परिचय प्राप्त करना यहां आवश्यक हो जाता है ।[१]

सेंगर जी ने भगवंतराय से सम्बंधित ` शंभुनाथ ` के सम्बंध में लिखा है ` शंभुनाथ कवि सं० १८०३ में उ० । यह कवि महाराज भगवंतराय खीची के यहां असोथर में रहा

१- गुरु और आश्रयदाता के ज्ञात होने से इनके समय का निश्चय हो जाता है । समय निश्चित हो जाने से अपने पूर्ववर्ती और परवर्ती शंभुनाथ नामधारी कवियों से ये अलग हो जाते हैं । इसके अतिरिक्त इनके एक मात्र प्राप्त ग्रन्थ अलंकार दीपक में गुरु का नाम स्पष्ट है अत: उसके सम्बंध में शंका नहीं उठाई जा सकती । इस ग्रन्थ का ही एक अंश ` भगवंतराय यश-वर्णन है ` । अत: वह ग्रन्थ इनका नहीं, यह भ्रान्ति भी नहीं पैदा हो सकती । तीसराग्रन्थ हमारे देखने में नहीं आया अत: उसके सम्बंध में पूर्ववर्ती इतिहासकारों की बात मान लेनी ठीक होगी । हाँ, इन्हीं के समकालीन सुखदेव मिश्र के ही एक शिष्य शंभुनाथ त्रिपाठी हुए हैं । उन्होंने ` बैताल पच्चीसी ` ग्रन्थ में अपना ` शंभुनाथ त्रिपाठी ` नाम स्पष्ट लिखा है । अत: वे शंभुनाथ मिश्र के साथ ही नहीं मिलाये जा सकते । इस प्रकार इनका व्यक्तित्व नाम के घपले में नहीं पड़ता ।

करते थे। शिव कवि इत्यादि सैकड़ों मनुष्यों को इन्होंने कवि कर दिया। कविता में निपुण थे। रस-कल्लोल ', ' रस-तरंगिणी ', ' अलंकार दीपक ' ये तीन ग्रन्थ इनके बनाये हुए हैं।[१] बाद के इतिहासकारों ने सैंगर जी के लिखे परिचय से अधिक कुछ नहीं कहा है। मिश्र बंधुओं ने सैंगर जी को ही आधार बनाकर इनका वृत्त लिखा है। कुछ अटकल भी लगा लिया है जैसे ' इनके अलंकार दीपक ' में दोहा अधिक हैं छन्द कम। इस ग्रन्थ में सीची नृप का यश-गान बहुत है और बढ़िया भी है। इसमें कवि ने गद्य में टीका भी लिख दी है[२]। ग्रन्थों के नाम सैंगर जी के ही ग्रन्थ से उद्धृत किये गए हैं। खोज-रिपोर्टों में भी इनका कोई नया ग्रन्थ नहीं मिलता। ऊपर बताए गए तीन ग्रन्थों में से केवल अलंकार दीपक ही देखने को मिला है। (सरस्वती पुस्तकालय रामनगर, वाराणसी के सौजन्य से) ' रसकल्लोल ' का केवल वही अंश देखने में आया है जो खोज रिपोर्ट में उद्धृत है। उसी में प्रक्षिप्त भगवंतराय की विरुदावली (भगवंतराय का यश-वर्णन)[३] के दो चार छन्द मिले हैं। इनके अतिरिक्त रीतिकाल के संग्रह ग्रन्थों में भी कुछ छन्द प्राप्त हुए हैं।

इस सामग्री के अनुसार हम इनके परिचय में निम्न निष्कर्ष निकालते हैं।

' शंभुनाथ मिश्र ब्राह्मण थे। इनके माता-पिता, निवासस्थान व परिवार इत्यादि पर प्रकाश डालने वाले न तो वहि: साक्ष्य हैं न अन्तःसाक्ष्य। इतना अवश्य है कि इन्होंने सुखदेव मिश्र से काव्य-शिक्षा पाई थी। सुखदेव मिश्र अपने समय के प्रख्यात कवि व आचार्य थे। अलंकार दीपक में आया यह दोहा प्रमाण है :

' श्री गुरुकवि सुखदेव को चरनन को परभाउ
बरनन को हिय देतु धरि बरनन को समुदाउ '

गुरु के लिए लिखे गए इन शब्दों के अतिरिक्त इन्होंने अलंकार दीपक में किसी आश्रयदाता

१- सरोज० पृ० ४६१

२- मिश्र० भाग-२ पृ० ६८१

३- सरोज० पृ० ४६१

का नाम तक नहीं लिखा । स्वयं अपने विषय में भी उसी प्रकार मौन-व्रत का निर्वाह किया है । अपने गुरु सुखदेव के ही समान इन्होंने भी आचार्य का आसन ग्रहण किया । सेंगर जी ने लिखा भी है ' शिव इत्यादि सैकड़ों मनुष्यों को कवि कर दिया ' [1]

आश्रय

इनकी रचनाओं से स्पष्ट होता है कि ये नियमित रूप से भगवंतराय के ही आश्रय में रहे । इधर उधर आने जाने की इनकी प्रकृति नहीं थी । भगवन्तराय की मृत्यु के उपरान्त ही इनको जीविका के लिए अवध में बैस राजा ' रनजीत सिंह ' के यहां विवश होकर जाना पड़ा होगा । यहीं इन्होंने ' भगवंतराय का यश वर्णन ' समाप्त कर भगवंत राय के प्रति अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित की । प्रमाण में 'भगवंतराय का यश-वर्णन' की उपसंहारात्मक पंक्तियां हैं :

' सदा रनजीत यह बाबूरनजीत सिंह
दीप जंबू दीप को महीप बैसवारे को ' [2]

इनका कविता काल संवत् १७९२ के आसपास मानना समीचीन होगा ।

विशेष

भगवंतराय के समय में असोथर बड़ा साहित्यिक केंद्र था । स्वयं उनके आश्रय में अनेक विख्यात कवि काव्य-साधना करते थे । इन कवियों में से कुछ बड़ी शिष्य मण्डली थी । शंभुनाथ और उनके गुरु सुखदेव मिश्र के अनेक शिष्यों का उल्लेख मिलता है ।

१- सरोज० पृ० ४९१

२- खोज० १९२० ई० कवि संख्या-१७२ (ब)

उदयनाथ ` कवीन्द्र

(कवि परिचय)

उदयनाथ ` कवीन्द्र ` के समय को निर्धारित करने के दो आधार हो सकते हैं। (१) आधार तो उन आश्रय दाताओं का समय है जिनकी प्रशस्ति में इन्होंने कुछ रचनायें की हैं। (२) `रस चन्द्रोदय ` नामक अपनी कृति में उसका रचना-काल कवि ने स्वयं दे दिया है जो संवत् १८०४ वि० है।

` कवीन्द्र ` हिम्मतसिंह, भूपति सिंह, भगवंतराय खीची और रावराजा बुद्ध सिंह हाड़ा के सम्पर्क में आये थे और इन सभी के लिए लिखे उनके छन्द प्राप्त हो जाते हैं। इन सब का समय विक्रम की १८वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध है अत: कवि का कविता काल भी यही माना जायगा। ` रस चन्द्रोदय ` की रचना-तिथि से इसकी पुष्टि भी हो जाती है। कालिदास त्रिवेदी और ` दूलह ` के कविता काल के अनुसार भी यह समय ठीक जान पड़ता है।[१]

इन सब पक्षों पर विचार करने के उपरांत मिश्र बंधुओं ने इनके समय का जो अनुमान किया है वह निर्भ्रान्त प्रमाणित होता है। अत: हम मिश्र बंधु विनोद के अनुसार ही इनका परिचय देना उचित समझते हैं।

मिश्रबंधु विनोद के आधार पर हम कह सकते हैं कि ये कानपुर जिले के वनपुरा ग्राम के निवासी और कान्यकुब्ज तिवारी थे। इनके पिता का नाम कालिदास त्रिवेदी और पुत्र का नाम ` दूलह ` था। इनके आश्रयदाता अमेठी के राजा हिम्मत सिंह व भूपति सिंह, रावराजा बुद्धसिंह हाड़ा, भगवंतराय खीची और जयपुर घराने के कोई ठिकानेदार गजसिंह थे। इन सब के आधार पर इनका कविता काल विक्रम की अठारहवीं शताब्दी के अंतिमचरण के कुछ समय बाद तक सिद्ध होता है।[२]

१- हि० इति० पृ० ३१४ और पृ० ३४७

२- मिश्र० भाग-२ पृ० ५३८

भगवंतराय के प्रति लिखा गया इनका यह छन्द ` श्रृंगार संग्रह ` में मिलता है :

मुक्कत अचल अरि लुक्कत उलूकन लौं
    मुक्कत किलेन के हुकार नद वैस के
भनत कवीन्द्र तहां कै सकै मवासे कौन
    कंपत मवासे अलिकेस (हरिकेस) के लकेस के
जीति कै जहूर साजे फौजन के अग्र वाजे
    भारे भगवंत के सवारे वलवैस के
दरजे दिली के उमरावन के उर धारे
    गरजे नगारे गाजीपुर के नरेस के `

सुखदेव मिश्र

(कवि परिचय)

सुखदेव मिश्र से सम्बंधित पूर्व सूचना का विवरण : शिवसिंह सैंगर, सर जार्ज अब्राहम गियर्सन, महावीर प्रसाद द्विवेदी तथा मिश्रबंधु आदि प्रमुख इतिहास लेखकों एवं विद्वानों ने सुखदेव मिश्र का सम्बंधभगवंत राय खीची से बताया है इसलिए उनके सम्बंध में यहां सम्यक रूप से विचार करना आवश्यक हो जाता है।

हिन्दी के सर्व प्रथम इतिहास लेखक गार्सा द तासी ने लिखा है ` सुखदेव हिन्दू लेखक जिनका आविर्भाव १६वीं शताब्दी में इलाहाबाद प्रान्त के पुराने नगर औरछा ( orscha ) के एक राजा के आश्रय में हुआ। मर्दन नामक इस राजा के आश्रय में ही इस कवि ने साहित्य सेवा की। ` रसार्णो या रसार्णव ` शीर्षक पद्यात्मक रचना उनकी देन है जो, जैसा कि उसके शीर्षक से प्रकट है, काव्यात्मक और नाटकीय रसों की व्याख्या करती है। इस उद्धरण से हमें दो बातें ज्ञात होती हैं :

१- तासी० पृ० ३१६

१- सुखदेव १६वीं शताब्दी के कवि थे जिन्होंने मर्दन ' रसार्णव ' नामक ग्रन्थ की रचना की है । ग्रन्थ रस सम्बंधी था ।

२- वे मर्दनसिंह के आश्रित थे जो ओरछा के राज थे । शिवसिंह सरोज के अनुसार इस नाम के तीन कवि हुए हैं, जिनमेंसे अंतिम दो के एक होने का सरोजकार को संदेह था । इस सम्बंध में सेंगर जी के ही शब्दों को उद्धृत करना संगत होगा ।

१- श्री सुखदेव मिश्र कवि (१) कंपिलावासी सं० १७२८ में उ० । यह कवि भाषा साहित्य के आचार्यों में गिने जाते हैं । प्रथम राजा अर्जुन सिंह के पुत्र राजा राजसिंह गौर के यहां जाकर कविराज की पदवी पाकर ' वृत्त विचार नाम पिंगल सब पिंगलों में उत्तम ग्रन्थ रचा । तत्पश्चात् राजा हिम्मत सिंह वंघलगोती अमेठी के यहां आय छंदविचार नाम पिंगल बनाया । फिर नवाब फाजिलअलीप्रकाश नाम ग्रन्थ महा अद्भुत रचा । इन तीनों ग्रन्थों के सिवा हमने कहीं लिखा देखा है कि अध्यात्म प्रकाश, दशरथ राय, ये दो ग्रन्थ और भी इन्हीं महाराज के रचे हुए हैं ।'[१]

२- सुखदेव मिश्र कवि (२) दौलतपुर जिला रायबरेली वाले सं० १८०३ में उ० बैसवारे में यह महाराज कवि हो गए हैं । राव मर्दन सिंह बैस डौंडिया खेरे के यहां थे और उन्हीं के नाम से नायिका भेद का रसार्णव नाम ग्रंथ बहुत सुंदर बनाया है । शंभुनाथ इत्यादि कवि इन्हीं के शिष्य थे ।[२]

३- सुखदेव कवि (३) अन्तर्वेद वाले सं० १७६१ में उ०

यह कवि महाराज भगवंतराय खीची असोथर वाले के यहां थे । कुछ आश्चर्य नहीं कि यह महाराज सुखदेव मिश्र दौलतपुर वाले ही हों ।'[३]

१- सरोज० पृ० ४६०

२- सरोज० पृ० ४६०

३- सरोज० पृ० ४६१

उपर्युक्त कथन से अपने निष्कर्षों को हम इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं :

(१) सुखदेव मिश्र (१) का कविता काल संवत् १७२८ वि० के आसपास था ।

(२) इनके आश्रयदाता क्रमश: राजसिंह गौर, हिम्मतसिंह बंघलगोती तथा नवाब फाजिल अली थे । इन आश्रयदाताओं की सेवा में क्रमश: `वृत्त विचार` `छंद विचार` तथा `फाजिल अलीप्रकाश` नामक ग्रन्थ कवि ने समर्पित किए ।

(३) अध्यात्म प्रकाश और दशरथ राय नामक ग्रन्थ भी इन्हीं महाशय के लिखे थे इसे सेंगर जी ने कहीं लिखा हुआ देखा था ।

सुखदेव मिश्र (२) कविता काल १८०३ वि० के आसपास था । और ये दौलतपुर के निवासी थे । इन्हीं की रचना रसार्णव है जो डौंड़िया खेर के राव मर्दन सिंह को समर्पित है । शंभुनाथ आदि कवि इन्हीं के शिष्य थे ।

सुखदेव मिश्र (३) का कविता काल संवत्१७६१ । भगवंतराय खीची के आश्रित । सेंगरजी को सुखदेव कवि नं० २ और ३ को एक ही व्यक्ति होने का संदेह था ।

ग्रियर्सन ने भी सेंगर जी के ही आधार पर सुखदेव नाम के तीन कवि बताए हैं । (१) सुखदेव मिसर-कविराज कपिला के १७०० ई० के आसपास उपस्थित । यह गौड़ राजा अर्जुनसिंह के पुत्र राजसिंह के दरबार में थे और उन्हीं से इन्होंने कविराज की उपाधि पाई । यहां इन्होंने वृत्त विचार नामक पिंगल ग्रन्थ रचा जो कि अपने ढंग के ग्रन्थों में सर्वश्रेष्ठ समझा जाता है । यहां से अमेठी के राजा हिम्मत सिंह के यहां गए जहां इन्होंने छंद विचार नामक एक दूसरा पिंगल ग्रन्थ लिखा । वहां से वे औरंगजेब के मंत्री फाजिल अली खां के यहां गए जहां भाषा साहित्य का अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ फाजिल अली प्रकाश रचा ।..... ये अध्यात्म प्रकाश और दशरथराय के भी कर्ता थे । इनके सबसे अधिक प्रसिद्ध शिष्य कपिला के जयदेव थे ।'

(२) सुखदेव कवि-दौआब के १७५० ई० में उपस्थित । यह असोथर(फतेहपुर) के भगवंतराय खीची के दरबार में थे ।

(३) सुखदेव दौलतपुर वाले १७४० ई० में उपस्थित रसार्णव के कर्ता । शंभुनाथ बंदीजन इनके शिष्य थे ।

आचार्य पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सुखदेव मिश्र शीर्षक लेख लिखा है जो प्राचीन पंडित और कवि नामक पुस्तक में संकलित है । इस लेख में प्राप्त सुखदेव मिश्र सम्बंधी सूचनाओं और पूर्व के उल्लेखों में बहुत अधिक अन्तर है । द्विवेदी जी लिखते हैं ' ग्रियर्सन साहब और शिवसिंह सेंगर ने इनके विषय में बड़ा गड़बड़ किया है । एक जगह आप इनको सुखदेव मिसर लिखते हैं और कंपिला के रहने वाले बतलाते हैं । दूसरी जगह आप इनका नाम सुखदेव कवि लिखते हैं और अंतर्वेद (गंगा यमुना के बीच का भाग) इनका देश बतलाते हैं । तीसरी जगह आप इनका नाम ' सुखदेव मिसर कवि ' लिखते हैं और दौलतपुर इनका स्थान बतलाते हैं । इतना ही नहीं आगे और भी लिखते हैं ' ग्रियर्सन साहब ने अपनी पूर्वोक्त पुस्तक विशेष करके शिवसिंह सरोज के आधार पर ही लिखी है । कहीं कहीं तो आपने शिवसिंह के लेखका शाब्दिक अनुवाद कर डाला है । इससे शिवसिंह सरोज में सुखदेव जी के विषय में जो गड़बड़ है वही ग्रियर्सन साहब की पुस्तक में भी है ।

यहां आचार्य द्विवेदी के मत का संक्षिप्त उल्लेख कर देना आवश्यक है क्योंकि आगे के इतिहासकारों ने इन्हीं के निष्कर्षों को आंख मूंद कर मान लिया है । यहां तक कि ग्रियर्सन साहब के ग्रन्थ के हिन्दी अनुवाद में टि० देकर जोड़ दिया गया कि ये तीनों कवि एक ही हैं ।[१]

१. आचार्य द्विवेदी जी इन तीनों (यादो ३) नामधारी कवियों को एक मानते हैं और यह भी कहते हैं कि इस नामधारी कवियों के जितने भी ग्रन्थ हैं वे सब एक ही व्यक्ति के रचे हुए हैं ।

२. ये कंपिला के मूल निवासी हिमकर के मिश्र थे । काशी में विद्या पाई और वहां से लौटकर असोथर के राजा भगवंतराय के यहां रुके । शाक्त होने के कारण वैष्णव भगवंतराय के साथ पटरी न बैठी और ये असंतुष्ट होकर वहां से राव मर्दन सिंह(डौड़िया खेर) के यहां चले गये । यहां से भी किसी कारण से अमैठी के राजा हिम्मत सिंह के यहां चले गये । अमैठी से ये (इन्होंने) औरंगजेब के मंत्री फाजिलअली का आश्रय ग्रहण किया ।

१- ग्रियर्सन० पृ० २०१

जहां से मुरार मऊ के बैसराज देवी सिंह के यहां आए और इन्हीं अंतिम आश्रयदाता के अनुग्रह से दौलतपुर में बस गए ।

३.   ग्रन्थ... रसार्णव, वृत्त विचार पिंगल, श्रृंगारलता और फाजिल अली प्रकाश । रसार्णव मर्दनसिंह के लिए, वृत्त विचार पिंगल अमेठी के राजा हिम्मद सिंह के लिए, फाजिलअली प्रकाश नवाब फाजिल अली के लिए और श्रृंगारलता की रचना राजादेवी सिंह के लिए की । इन ग्रन्थों के अतिरिक्त कुछ स्फुट रचनाओं की भी सूचनायें देते हैं ।

४.   द्विवेदी जी दौलतपुर के निवासी उनके वंशजों की साक्षिता के अनुसार उनका गौड़ राजा अर्जुनसिंह के दरबार में जाना नहीं स्वीकार करते । अर्जुन सिंह के लिए बनाए गए वृत्त विचार पिंगल ग्रन्थ को इसी कारण से वे किसी अन्य कवि की कृति होने का संदेह करते हैं । इस सम्बंध में द्विवेदी जी के ये शब्द हैं । " सुखदेव जी के बनाए हुए ग्रंथों में ग्रियर्सन और शिवसिंह एक छंदो विचार पिंगल बतलाते हैं । वह शायद किसी दूसरे सुखदेव का बनाया हुआ होगा ।" इस के आगे द्विवेदी जी ने लिखा है कि सुखदेव जी ने अध्यात्म प्रकाश और दशरथराय नाम के दो अन्य ग्रन्थ भी बनाए हैं, परन्तु इस बात से भी दौलतपुर के बुढ़े बुढ़े मिश्र अपनी अनभिज्ञता प्रकट करते हैं । द्विवेदी जी ने इन दोनों ग्रन्थों के रचयिता की संभावना किसी दूसरे ही सुखदेव कवि के पक्ष में प्रकट की है ।

मिश्र बंधु विनोद में इनके परिचय को विस्तार से दिया गया है और सच तो यह है कि स्वतंत्र विचार के स्थान पर द्विवेदी जी की ही सूचना पर प्रामाणिकता की मुहर लगा दी गई । इतना ही नहीं द्विवेदी जी को संदेह था वह भी यहां मिटा दिया गया और अर्जुन सिंह के आश्रित सुखदेव तथा अध्यात्म प्रकाश और दशरथ राय के रचयिता सुखदेव समेट कर एक करदिए गए ।

मिश्रबंधु विनोद भाग दो पृ० ४७६ की यह सूचना दृष्टव्य है :

नाम कविराज सुखदेव मिश्र

जन्म भूमि कम्पिला

जन्म काल अनुमान से १६६० वि० के लगभग

कविता काल... १७२८

ग्रन्थ (१) वृत्त विचार, (२) छंद विचार, (३) फाजिल अली प्रकाश (४) रसार्णव (५) श्रृंगारलता (६) अध्यात्म प्रकाश (७) दशरथ राय (८) नख शिख (९) पिंगल ।

आश्रयदाता : काशी से विद्याध्ययन करके भगवंतराय डौंड़िया खेरे के मर्दनसिंह नवाब फाजिल अली अर्जुन सिंह के पुत्र राजसिंह गौड़ अमेठी के राजा हिम्मत सिंह और अंत में मुरारमऊ के देवी सिंह के यहां इनका रहना क्रमश: स्वीकार करते हैं ।

ग्रन्थ : वे उपर्युक्त सारे ग्रन्थों को एक ही सुखदेव की कृति मानते हैं (यहां ध्यान देने की बात है कि इनमें से ग्रंथावलोकन केवल फाजिल अली प्रकाश २ वृत्त विचार ३ छंद विचार और ४ अध्यात्म प्रकाश का ही किया गया है ।)[१]

यहां यह स्पष्ट हो जाता है कि शिवसिंह सेंगर से लेकर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी तक सुखदेव नामधारी कवि और उनकी रचनाओं के विषय में जो एक व्यक्ति से अधिक होने की अनिश्चितता थी उसे मिश्र बंधु विनोद में आंख मूंद कर उपेक्षित किया गया और तीनों (या दो ?) सुखदेव नामक कवियों को एक ही व्यक्ति स्वीकार कर लिया गया ।[२] मिश्र बंधुओं की इस मान्यता का आधार यद्यपि मूलत: द्विवेदी जी का लेख ही है फिर भी उन्होंने स्वयं द्विवेदी जी के संदेह पर भी तनिक ध्यान न दिया तथा पं० कृष्ण बिहारी मिश्र के मूल्यावान संकेतों की भी उपेक्षा की । पं० कृष्ण बिहारी जी ने स्पष्ट लिखा था '..... हमारे पास वृत्त विचार की जो प्रति है वह या तो दौलतपुर स्थित हिमकर के मिश्रों के पूर्वज सुखदेव मिश्र से भिन्न किन्हीं दूसरे सुखदेव मिश्र की बनाई है अथवा दौलतपुर के हिमकर वाले मिश्र सुखदेव जी के वंशज नहीं है या यह भी हो सकता है कि उसके भीतर और कोई रहस्यमय बात हो जिसे हम लोग कोई नहीं समझ पाये हैं ।'[३]

१- मिश्र० भाग २, पृ० ४७६-८३

२- पं० रामचन्द्र शुक्ल तथा ' हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास भाग षष्ठ के लेखक ने एवं ' हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास में डा० भगीरथ मिश्र प्रभृति ने मिश्रबंधु विनोद का ही अनुसरण किया है ।

३- साहित्यसमालोचक- भाग ३, संख्या १, श्रावण सं० १९८४

<u>पूर्व उल्लेखों की परीक्षा और सुखदेव मिश्र कवि का काल-निर्णय</u> : उपर्युक्त विवरण के अवलोकन से स्पष्ट हो जाता है कि सुखदेव मिश्र और उनकी रचनाओं में एक घपला हो गया है अत: सम्यक् परीक्षण की आवश्यकता है। हमारे समक्ष विचार करने के तीन आधार हैं। (१) शिवसिंह सरोज से भी पूर्व के उल्लेख(बहिस्साक्ष्य) (२) उन इतिहास प्रसिद्ध व्यक्तियों एवं कवियों का समय जिनके साथ सुखदेव कवि का सम्बंध तथा (३) कृतियों के भीतर नाम और वंश परिचय एवं (ख) भाषा शैली (अन्तस्साक्ष्य)।

भगवंतराय का राज्य काल संवत् १७७२ से १७६२ वि० तक माना जाता है। उनकी मृत्यु संवत् १७६२ विक्रमी में हुई। मर्दनसिंह भगवंतराय के समकालीन औरउनके बहनोई थे। उन्होंने स्वेच्छा से १७६७ वि० सं० में अपने राज्य को तीन हिस्सों में बंटवारा करके अपने तीन पुत्रों को सौंप दिया था। हिम्मत सिंह का समय भी लगभग इसी समय या इससे १०-२० वर्ष पूर्व मानना युक्तियुक्त मालूम होता है। १७६३ सं० में हिम्मतसिंह के पुत्र भूपति सिंह राज्यासीन थे।[२] इसलिए हिम्मतसिंह का शासन-काल भी १८वीं शताब्दि के उत्तरार्द्ध में रखना समीचीन मालूम होता है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी और मिश्र बंधुओं ने लिखा है इन आश्रयदाताओं के यहां से सुखदेव जी फाजिल अली के यहां गये। फाजिल अली को समर्पित किये गये अपने ग्रन्थ में कवि ने रचनाकाल संवत् १७३३ दिया है।[३] फाजिल अली को इन लोगों ने औरंगजेब का मंत्री माना है - यह कथन इतिहास की दृष्टि से अत्यंत असंगतिपूर्ण है।

उपर्युक्त विवेचन से बात घुमाकर यों भी कही जा सकती है कि सुखदेव मिश्र पहिले अर्जुनसिंह गौर के पुत्र राजसिंह गौर और फाजिल अली खां के यहां गये होंगे, और

१- उन्नाव गजेटियर के विवरण के अनुसार

२- भूपति सतसई के रचनाकाल और सादतखां के युद्ध की तिथि के अनुसार। दूसरे के लिए देखिये फ० नवा० पृ० ६२

३- खोज०(१३वीं जिल्द) १६२६-२८ ई० की संख्या ४६५ ई० के आधार पर।

इन दोनों आश्रयदाताओं के यहां रहने के बाद वे भगवंतराय के यहां आये । किन्तु यह अनुमान ठीक नहीं लगता । पहिले तो यह कि सुखदेव मिश्र जिन्होंने ` वृत्त विचार ` नामक कृति लिखी उन्हें राजसिंह गौर ने ` कविराज ` की उपाधि से सम्मानित किया । ` वृत्त विचार ` की प्राढ़ता और ` कविराज ` उपाधि दिये जाने के पूर्व कवि का सम्मान और उसकी वरिष्ठता का अनुमान करना पड़ता है जिससेयह मानना पड़ेगा कि कवि की अवस्था इस समय तक ३० वर्ष से कम न रही होगी । वृत्त विचार में उसका रचना काल संवत् १७२८ वि० है ।[१] अगर वृत्त विचार का रचयिता [redacted] और भगवंतराय का आश्रित सुखदेव मिश्र एक ही व्यक्ति हैं तो स्वीकार करना पड़ेगा कि भगवंतराय की मृत्यु के समय इन सुखदेव की आयु ६४ वर्ष की रही होगी । भगवंतराय की मृत्यु के बाद भी कवि जीवित रहा।यह द्विवेदी जी के लेख में ही उद्धृत निम्न पंक्ति से स्पष्ट है :

` त्यों भुवकंत, बिना भगवंत लगै अब अन्तर्वेद न नीकों `

इस प्रकार यदि ` वृत्त विचार ` और फाजिल अली प्रकाश ` के रचयिता सुखदेव को ही ` मर्दन रसार्णव ` का रचयिता माना जाय, जैसा श्री द्विवेदी और मिश्र बन्धुओं का विचार है, तो यह मानना पड़ेगा कि सुखदेव मिश्र ने प्राय: ७० वर्ष तक काव्य-निर्माण किया और उनकी काव्य प्रतिभा ७० वर्ष तक अर्थात् उनके जीवन के ६५ वर्ष तक वैसी ही पैनी और अशिथिल बनी रही । यह बात कुछ जंचती नहीं । इस प्रकार सुखदेव नाम के एक ही कवि मानने में सबसे पहले आयु और कविता-काल के आधार पर संदेह जागृत होता है । यह संदेह अन्य प्रमाणों से किस प्रकार पुष्ट होता है इस का विवेचन हम निम्न पंक्तियों में प्रस्तुत करेंगे ।

पहली बात जो सामने आती है वह यह कि वृत्त विचार के लेखक कंपिलावासी सुखदेव ने जो अपना वंश-परिचय दिया है वह दौलतपुर निवासी सुखदेव मिश्र के वंशजों से भिन्न है । वृत्त विचार के कर्ता भारद्वाज गोत्री शुक्ल मिश्र थे जब कि दौलत पुर वाले हिमकर के मिश्र थे ।[२]

१- संवतसत्रह से बरस अठाइस अति चारु

जेठ सुकुल तिथि पंचमी उपज्यो वृत्त विचार । वृत्त विचार०

२- साहित्य समालोचक, श्रावण १९८४

दूसरा आधार कृतियों में कवि नाम की छाप में मिलता है । वृत्त-विचार और फाजिल अली प्रकाश के कर्ता ने प्राय: ` सुखदेव सुकवि ` और ` कविराज ` नामों की छाप छोड़ी है जबकि रस-दीपक मर्दन, रसार्णव एवं छंद विचार पिंगल के कर्ता ने एक भी जगह ` कविराज ` शव्द का व्यवहार नहीं किया । इतना ही नहीं इन्होंने ` मिश्र सुखदेव ` की छाप छोड़ी है । कविराज नामकी छाप के दो उदाहरण यहां उपयुक्त होंगे :

` कविराज` कहत संकट विदिता सो कहै छंद मागधो सोई `

वृ०वि० पिंगल

` करहु कृपा` कविराज ` को कामद कान्ह कुमार

फाजिल अली प्रकाश०

इन्होंने ` कविराज ` का प्रयोग अपने मूल नाम की भी अपेक्षा अधिक किया है । इसके अतिरिक्त इन्होंने ग्रन्थ समापन की पुष्पिका में भी प्रदर्शन-प्रियता का संकेत किया है जैसे ` इति श्री कवि कुलालंकार चूड़ामनि मिश्र शुकदेव(सुखदेव) कविराज विरचिते फाजिलअली प्रकाश सम्पूर्ण: ।`[१] दूसरी ओर मर्दन रसार्णव के कर्ता सुखदेव ने जो पुष्पिका दी है वह अत्यन्त सीधे सादे शव्दों में है, यथा - ` इति श्री मरदन रसार्णो सुखदेव विरचितम् सम्पूर्णम् ।`[२]

अंत में यहां हम ` सूदन ` के ` सुजान चरित ` में कवियों की सूची में ` कविराज ` और सुखदेव के पृथक् उल्लेखों का संकेत कर देना उचित समझते हैं तथा[३] आचार्य द्विवेदी के लेख में आये इस वाक्यांश की याद दिला देना चाहते हैं - ` परन्तु सुखदेव जी के वंशजों को इस बात की बिल्कुल खबर नहीं । वे कहते हैं कि सुखदेव जी कभी गौड़ नहीं गये और वृत्त विचार पिंगल उन्होंने गौड़ में नहीं बनाया ।`[४]

१- खोज०(१३वीं जिल्द) १६२६-२८ क्रम संख्या ४६५ डी०

२- सरस्वती पुस्तकालय रामनगर बनारस में प्राप्त प्रति के अनुसार

३- ` सुजान चरित ` में सूदन ने १७५ कवियों को प्रणाम किया है ।
` कविराज ` और सुखदेव नाम प्रथक-प्रथक लिखे गये हैं ।

४- प्रा० पं० पृ० ६६

इस प्रकार सिद्ध होता है अर्जुन सिंह गौड़ के पुत्र राजसिंह और फाजिल अली के दरबार से सम्बंधित सुखदेव मिश्र एक ही व्यक्ति थे। इन्होंने अपने ग्रन्थों में अपना परिचय दे दिया है। इनकी प्राप्त पुस्तकों का रचना काल संवत् १७२८ और १७३३ है। ये कंपिला के रहनेवाले भारद्वाज गोत्री शुक्ल थे जो मिश्र कहलाए।[१]

अब प्रश्न उठता है कि 'दशरथराय' और 'अध्यात्म प्रकाश' नामक ग्रन्थों के रचयिता सुखदेव कवि कौन हैं? द्विवेदी जी ने प्राचीन पंडित और कवि पुस्तक में लिखा है "....(ग्रियर्सन और शिवसिंह) वे यह भी लिखते हैं कि सुखदेव जी ने 'अध्यात्म प्रकाश' और 'दशरथ राय' नाम के भी दो ग्रन्थ बनाये हैं, परन्तु इस बात से भी दौलतपुर के बुड्ढे बुड्ढे मिश्र अनभिज्ञता प्रकट करते हैं।" मिश्र बन्धुओं ने इस पर भी पर्दा डाल दिया और इन कृतियों को भी सुखदेव कवि की कृतियों में मिला दिया।

हमें अध्यात्म प्रकाश की कई प्रतियां देखने को मिली हैं। इसका रचना काल संवत् १७५५ है।[१] इसमें कविनाम की छाप में 'कविराज' शब्द का एक भी स्थान पर प्रयोग नहीं हुआ है। 'मिश्र' पद भी कहीं नहीं मिला। अत: इस आधार पर ये दो सुखदेव नाम धारी कवियों से पृथक् अपना अस्तित्व प्रमाणित करते हैं। इनका वर्ण्य विषय भी दार्शनिक अथवा आध्यात्मिक है। यह विषय भी एक विभाजक रेखा बनता है। हमें नागरीप्रचारिणी सभा के पुस्तकालय में 'ज्ञान प्रकाश' और 'गुरु महिमा' नामक दो खंडित पुस्तकें देखने को मिली हैं। ज्ञान प्रकाश भी संवत् १७५५ की रचना है। इसका वर्ण्य-विषय अध्यात्म प्रकाश के समान ही है। शैली भी वही है। संवाद रूप में इन दोनों की विषयवस्तु प्रस्तुत की गई है। शिष्य की शंका का गुरु समाधान करता है। 'गुरु महिमा' में कुल १५-२० छंद हैं। इसके रचयिता भी सुखदेव कवि हैं। स्मरणार्ह है कि इन तीनों ही ग्रन्थों में कविनाम की छाप एक सी है। केवल 'सुखदेव' नाम का

१- अध्यात्म प्रकाश की अनेक हस्तलिखितप्रतियां प्राप्त होती हैं। श्री वेंकटेश्वर प्रेस मुम्बई से यह मुद्रित हो चुका है। एक दो प्रतियों में यद्यपि संवत १७७५ वि० में रचनाकाल लिखा है परन्तु अधिकांश में रचनाकाल संवत् १७५५ ही है।

ही व्यवहार किया गया है । इस प्रकार कविनाम की छाप व विषय वस्तु की दृष्टि से इनका अस्तित्व दोनों सुखदेवों से अलग प्रतीत होता है । हां, यह बात संभावना से परे नहीं कि पहले सुखदेव ` कविराज ` ही अपने परवर्ती काल में विरक्त साधु हो गये हों । इस सन्यास काल में उन्होंने ` कविराज ` की उपाधि को भी त्याग दिया हो । परन्तु ये अध्यात्म प्रकाश के कर्ता सुखदेव, हिम्मतसिंह, मर्दनसिंह व भगवंतराय के यहां आश्रय ग्रहण करने वाले सुखदेव नहीं हो सकते । इसत्याग और संन्यास पूर्ण जीवन को बिताकर कोई न नायिका भेद का ग्रन्थ लिख सकता है और न दरबार-दारी का वातावरण ही ग्रहण कर सकता है । यहां हम इतना ही कहना चाहते हैं कि हमारे आलोच्य सुखदेव इन दोनों से भिन्न व्यक्ति थे ।

हमारे आलोच्य सुखदेव मिश्र इन दोनों सुखदेव नाम के कवियों से भिन्न व्यक्ति थे । इनके समय को प्रमाणित करने में इनके तीन इतिहास प्रसिद्ध आश्रयदाताओं का समय सहायक सिद्ध होता है । जैसा कहा गया है भगवंतराय औरमर्दन सिंह समकालीन और सम्बंधी थे । भगवंतराय के साथ वे उनके अंतिम युद्ध में भी रहे । हिम्मत सिंह का समय भी लगभग वही था । इस प्रकार इतिहास व समय की दृष्टि से इन तीन ठिकानों में आश्रय ग्रहण करने वाले सुखदेव एक ही व्यक्ति हो सकते हैं । इसके अतिरिक्त इन सुख-देव के तीन शिष्य - गुमान मिश्र,[१] शंभुनाथ त्रिपाठी[२] और शंभुनाथ मिश्र[३] - का समय विक्रम की १८वीं शताब्दी का अंतिम चरण में ही विद्यमान थे । इनके समय के द्वारा भी इनका काल निश्चित करने में सहायता मिलती है । इसके अतिरिक्त दौलतपुर के मिश्रों

१- वृह० इतिहास० पृ० ४६८ में इनका समय संवत् १८०० के आसपास माना गया है ।

२- इन्होंने अपने ` राम विलास ` और वैताल पच्चीसी दोनों ग्रन्थों में अपने गुरु सुखदेव के उल्लेख के साथ रचना-काल भी लिख दिया है । पहली कृति संवत् १७६८ और दूसरी संवत् १८०६ की है ।

३- इनका समय हमने इसी प्रबंध में १८वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध निश्चित किया है ।

द्वारा बताई गई बातें इन्हें सूक्ष्म रीति से विचार करने पर पहले दोनों सुखदेव नामधारी कवियों से भिन्न सिद्ध करती हैं तथा हिम्मतसिंह, भगवंतराय औरमर्दनसिंह के सम्बंध में प्रचलित अनुश्रुतियाँ द्वारा इनके इन तीन व्यक्तियों से सम्बद्ध व्यक्तित्व को प्रकाशित करती हैं ।[१]

इन के पृथक्करण के प्रमाण इतने ही नहीं हैं । इनकी रचना-प्रौढ़ता भी अपने पूर्ववर्तियों से कहीं अधिक है । आचार्य द्विवेदी ने इस नाम के कवियों के जितने ग्रन्थ देखे थे, उससे यह निष्कर्ष निकाला था कि -` इनके ग्रन्थों में`रसार्णव ` की कविता बहुत ही अच्छी है । उसमें वर्णन किये गये विषय का विचार न करके यह अवश्य कहना पड़ता है कि वह सर्वथा आचार्य के योग्य हुई है ।[२]

निष्कर्ष

इस अनुसंधान द्वारा निश्चित होता है कि सुखदेव नाम के तीन कवि हिन्दी साहित्य में एक शताब्दी के भीतर ही प्रसिद्ध हुए हैं । प्रथम ` कविराज ` की उपाधि से विभूषित हुए थे । इन्होंने अपने मुख से ही अपना परिचय विस्तार के साथ दे दिया है जो ` साहित्य समालोचक `[३] में प्रकाशित हो चुका है । दूसरे महाशय कोई साधु प्रकृति के अध्ययनशील पंडित व्यक्ति थे । इन्हें काव्य प्रतिभा भी उत्कृष्ट कोटि की मिली थी । इनका कविता-काल संवत् १७५५ वि० के आसपास था । हमारे आलोच्य सुखदेव मिश्र दोनों ही से भिन्न थे । इनका कविता-काल लगभग संवत् १७८० विक्रमी के आसपास से १८०० तक मानना उचित होगा । यह समय कवि के आश्रयदाताओं एवं उनके शिष्यों के समय से पूर्ण

१-`प्राचीन पंडित और कवि ` पुस्तक में सुखदेव पर लिखा द्विवेदी जी का लेख देखिये ।

२- प्रा० पं० पृ० १०४

३- श्रावण, सं० १९८४

मेल खाता है । इनके जन्मस्थान और जन्मकाल के सम्बंध में कोई भी जानकारी उपलब्ध नहीं ।[१] किंवदन्ती के अनुसार शिक्षा-दीक्षा काशी में ही सम्पन्न हुई मानना उचित होगा । इनका अध्ययन गंभीर और शास्त्रीय था । इसी से भाषा सम्बन्धी परिष्कार इनकी कविताओं की निजी विशिष्टता है । इनके आस-पास शिष्य वर्ग का एकत्र रहना तथा परवर्ती जीवन में अपने शिक्षक और उससे पाई हुई शिक्षा के लिए गर्वानुभूति करना इनके आचार्यत्व और इनके व्यक्तित्व की महत्ता को प्रमाणित करता है ।

इनके सर्व प्रथम आश्रयदाता भगवंतराय खीची थे । इनके यहां इन्हें अत्याधिक सम्मान प्राप्त हुआ । वहीं रहकर इन्होंने संगीत का भी अभ्यास किया तथा ध्रुपद राग के अनेक छन्द लिखे थे ।[२] शाक्त होने के कारण इनके और भगवंतराय के सम्बंध बिगड़ गये ।[३] भगवंतराय के यहां से चले जाने के बाद ये अमेठी या डौड़िया खेरे गये होंगे । पर संभव यह जान पड़ता है कि वे इन दोनों ही ठिकानों में समान रूप से आते जाते रहे । हिम्मत सिंह के लिए इन्होंने ' वृत्त विचार पिंगल ' तथा मर्दन सिंह के लिए ' रस दीपक ' तथा मर्दन रसार्णव नामक ग्रन्थों की रचना की है । देवी सिंह और इनके सम्बंध सबसे अंत में हुए थे और उन्हीं के द्वारा दिये गये दौलतपुर ग्राम के अधिवासी बन गये । यद्यपि इनके निधन काल का ज्ञान नहीं है पर इतना तो कहा ही जा सकता है कि ये संवत १७६२ तक तो जीवित ही रहे । भगवंतराय के प्रति लिखे गये किसी छन्द की यह पंक्ति इसका प्रमाण देती है ' त्यों भुवकंत विना भवविंत लगे अब अंतर वैद न नीको '[४] ।

१- प्रा०पं० ग्रन्थ में दौलतपुर के मिश्र लोगों की अनुश्रुतियों के आधार पर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने इनका जो वृत्त लिखा है उसमें इनके जन्म के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं मिलता। बाद को दौलतपुर ग्राम में इनका बस जाना स्वीकार किया है । स्पष्ट है कि यह कवि की जन्म भूमि न थी ।

२- पिलानी के जिन कम्पाउंडर भगवानदास का उल्लेख हम इसी प्रबंध में अन्यत्र भी कर चुके हैं, उनकी पुस्तक में भगवंतराय के यहां संगीतज्ञों में लेखक ने सुखदेव मिश्र का भी नाम लिखा है । उसी पुस्तक से इनके लिखे हुए कुछ ध्रुपद भरतजी ने लिख लिए थे ।

३- देखिये प्रा० पं० पृ० ८० से १०६

४- भगवंतराय के सम्बन्ध में सुखदेव की लिखी केवल यही पंक्ति प्राप्त है । इसे आचार्य द्विवेदी ने प्राचीन पंडित और कवि पुस्तक के पृ० १०५ में उद्धृत किया है । हो सकता है द्विवेदी जी के पास पूरा छन्द रहा हो, पर आज वह नहीं मिलता ।

व्यक्तित्व और अनुश्रुतियाँ

अनुश्रुतियों के ऐतिहासिक महत्व को आज अस्वीकार नहीं किया जा सकता। परन्तु वे अपने मूल रूप में ज्यों की त्यों भी नहीं ग्रहण की जा सकतीं। इनमें सत्यता जटिल रूप से निहित रहती है। इसमें किसी व्यक्ति या वस्तुस्थिति को परवर्ती काल में किस रूप में ग्रहण किया गया तथा जन-मानस में उसका क्या प्रभाव पड़ा यह तो व्यंजित ही रहता है। अत: मूल वस्तु को इनके माध्यम से बड़ी सावधानी के उपरान्त ही ग्रहण किया जाना चाहिए।

श्री सुखदेव मिश्र के सम्बंध में प्रचलित अनुश्रुतियां बड़ी ही रोचक और महत्वपूर्ण हैं।[१] यदि घटनाओं को अलग करके उनके द्वारा प्रकाश में आने वाले निष्कर्षों को अलग करें तो हम उन्हें इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं :

१- सुखदेव जी बड़े ही निष्णात विद्वान थे।

२- उनमें आश्चर्यजनक प्रतिभा थी। उनके वरद होने की मान्यता में असाधारणत्व की ध्वनि मिलती है।

३- वे बड़े ही स्वाभिमानी थे। अपने व्यक्तिगत मामलों में किसी का भी हस्तक्षेप वे सहन नहीं कर सकते थे। अक्खड़पन के कारण उनकी आश्रयदाताओं से खटपट हो जाती थी।

४- वे तांत्रिक एवं शाक्त थे। उन्होंने अनेक चमत्कार पूर्ण असाधारण कार्य किये। यहां तक - उन्होंने एक बार अपने आशीर्वाद से मर्दनसिंह के प्राणों की रक्षा भी की थी। वे सिद्ध थे और कुछ भी कर दिखाने में समर्थ थे।

१- प्रा०पं० पुस्तक में ' सुखदेव मिश्र ' शीर्षक लेख में द्विवेदी जी ने इनके सम्बंध में की उपलब्ध समस्त अनुश्रुतियां का उल्लेख कर दिया है। हम उनको पुन: यहां उद्धृत करके कलेवर-वृद्धि नहीं करना चाहते।

५- वे अत्यंत चरित्रवान् थे, अर्थात् उनमें स्त्रियों के लिए दुर्बलता न थी ।

इस प्रकार की अनुश्रुतियों का प्रचलन सदैव असाधारण व्यक्तित्व के कारण ही होता है । इनके माध्यम से सुखदेव जी का असाधारणत्व प्रकाशित होता है ।

क्या इन अनुश्रुतियों की पृष्ठभूमि में दूसरे सुखदेव कवि तो नहीं ? : इन अनुश्रुतियों के पीछे प्रथम सुखदेव, जो 'कविराज' नाम से अधिक प्रसिद्ध हैं, का व्यक्तित्व लेशमात्र को भी नहीं जान पड़ता । विनय शक्ति और स्वाभिमान की जो विभूति इन्हें मिली थी वह उनके पास नहीं थी । फिर मर्दन सिंह की प्राण रक्षा के लिए देवी की प्रार्थना में लिखे गए कवित्त से तो यह बिल्कुल ही स्पष्ट हो जाता है कि अनुश्रुति के सुखदेव मिश्र का सम्बंध मर्दनसिंह से था । इसी प्रकार भगवंतराय के यहाँ माँस का गुड़हल का फूल हो जाना तथा मदिरा का दूध बन जाना भी इन्हीं के पक्ष में सिद्ध होता है । देवी की सिद्धि एवं तांत्रिकता के लिए इन्हें ही स्वीकार करना होगा । हाँ, यदि दूसरे सुखदेव जिन्होंने अध्यात्म प्रकाश की रचना की थी एवं जो साधु और पंडित थे, उनके व्यक्तित्व से सम्बंधित भी कुछ गाथायें किसी रूप में इनके नाम के साथ की अनुश्रुतियों में घुल मिल गई हों तो कुछ आश्चर्य नहीं ?

नेवाज

(कवि परिचय)

नेवाज सम्बंधी पूर्व उल्लेखों की समीक्षा : हिन्दी साहित्य के इतिहास में नेवाज नाम के तीन कवियों का उल्लेख है ।[१] इन तीनों का जीवन काल लगभग एक शताब्दी के भीतर था । पहले नेवाज कवि की कृति है -

---

१- देखिए सरोज० पृ० ४४१; मिश्र०-२ पृ० ४६४ तथा हि० इतिहास० पृ० ३१७

' शकुंतला नाटक ' जिसका रचनकाल संवत् १७३७ वि० है।[1] अंतिम नेवाज कवि की कृति 'अखरावती' है जो संवत १८०७[2] की रची है। इस बीच के तीन इतिहास प्रसिद्ध संरक्षकों के साथ इनके सम्बंध स्थिर किए जाते हैं, जिनके द्वारा इनके समय आदि को निर्धारित करने में सहायता मिलती है। संरक्षक हैं - आजमशाह, छत्रशाल और भगवंतराय। इन संरक्षकों के अस्तित्व के साथ ही यदि तीन नामों की धारणा का कुछ पोषण हुआ हो तो यह कहना भी असंगत न होगा। प्रकाश में आई रचनाओं की संख्या भी केवल तीन है। पहली और अंतिम कृतियों के नाम व उनका रचनाकाल लिखा जा चुका है, तीसरी इन दोनों के मध्य की रचना ' छत्रशाल विरुदावली ' है।[3] इसके अतिरिक्त नेवाज के लिखे स्फुट छंद हैं जो रीतिकाल के संग्रह ग्रन्थों में मिल जाते हैं। इनके प्रकीर्ण छन्दों में श्रृंगार और वीर दोनों ही रसों का प्रतिनिधित्व होता है। इन्हीं से यह भी प्रमाण मिलता है कि इनका संबंध भगवंतराय से भी था। सेंगरजी ने भगवंतराय के प्रति लिखा इनका एक छंद भी अपने ग्रन्थ में उद्धृत किया जो संवत् १७९२ वि० में सादत खां के साथ लड़े गये युद्ध में भगवंतराय के पुरुषार्थ को प्रकट करता है। परन्तु वही छंद ' श्रृंगार संग्रह ' में हेम कवि के नाम से लिखा हुआ है। ' श्रृंगार संग्रह ' में नेवाज का एक दूसरा छन्द है जो भगवंतराय की यशप्रशस्ति में कहा गया है। इस प्रकार यह तो पुष्ट हो ही जाता है कि वे भगवंतराय के समकालीन थे और उनका भगवंतराय से सम्बंध भी था। श्रृंगार संग्रह में भगवंतराय के प्रति लिखा गया इनका छंद किसी अन्य प्रसंग पर कहा गया प्रतीत होता है।

छत्रशाल और भगवंतराय के यहां रहने वाले नेवाज में कुछ समान प्रकृति के लक्षण : अत: नेवाज नाम के उस

१- हिं० इतिहास पृ० ३१७

२- खोज० १९०९, कवि० संख्या २१७

३- खोज० १९१२, कवि संख्या १२६

कवि की छान बीन करना आवश्यक हो जाता है जिनका सम्बंध भगवंतराय के साथ था। नेवाज नाम के कवियों की कृतियों के अवलोकन से प्रकट होता है कि शकुंतला नाटक के लेखक नेवाज आजमशाह के समकालीन थे। जिन्होंने ब्रजभाषा के अति प्रचलित कवित्त और सवैया छन्दों में शकुंतला नाटक की रचना की थी जो युगानुसार नायिका भेद आदि समग्र साहित्यिक वातावरण को प्रस्तुत करता है। अभिनव सूझ बूझ एवं मौलिक प्रतिपादन के कारण इस कृति को रीति काल में अत्याधिक प्रसिद्धि मिली। इनकी प्रतिभा अत्यन्त उच्च कोटि की तथा भाषा-शैली अत्यंत समर्थ और सरस थी। वे संभवत: इस ग्रन्थ को लिखने के बाद अधिक दिनों तक जीवित रहे होंगे अन्यथा परवर्ती काल की उनकी कृतियों को काव्य-रसिक जन आसानी से भुला नहीं सकते थे। उनके एक इसी ग्रन्थ की अनेक प्रतिलिपियां आज भी इधर उधर देखने को मिल जाती हैं। शायद दास ने अपने काव्य निर्णय में शकुंतला नाटक के लेखक को ही ब्रजभाषा कवियों के आचार्यों में स्थान दिया है। फिर भी आजमशाह और छत्रशाल के समय की निकटता देख कर हमने 'छत्रशाल विरुदावली' से शकुंतला की भाषा-शैली मिलाकर देखने का प्रयत्न किया पर छत्रशाल विरुदावली सुलभ न हो सकी।[१] अत: इस सम्बंध में हम कुछ नहीं कह सकते हैं। पर भगवंतराय और छत्रशाल के यहां रहने वाले नेवाज नामधारी कवियों में द्वित्व सिद्ध करना कठिन होगा। वास्तव में दोनों की अभिन्नता की धारणा का पोषण इनके यहां रहने वाले नेवाज की काव्य-गत प्रवृत्तियाँ एवं स्वभाव आदि से हो जाती है। भगवंतराय और छत्रशाल की प्रशस्ति में काव्य रचना करने वाले 'नेवाज' की प्रवृत्ति किसी ऐसे नायक के गुण-कथन की ओर थी जो तत्कालीन दिल्ली के मुस्लिम शासन का विरोधी रहा हो तथा जिसमें हिन्दुत्व को स्थापित करने की अधिकतम शक्ति हो। उसे हिन्दुओं के उत्कर्ष से अपार हर्ष होता था। मुसलमानों के पराभव में उसकी अभिलाषा

१- नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित खोज रिपोर्ट सन् १९१२-१४ में मंगन जी उपाध्याय तुलसी चौतरा मथुरा में उक्त ग्रन्थ का होना लिखा है, पर हमें मंगन जी के पुत्र के पास वह ग्रन्थ नहीं मिला। उन्होंने बताया कि उनके यहां से यह ग्रन्थ कोई ले गया है, कौन ले गया है, उन्होंने यह भी नहीं बताया।

फलीभूत होती थी ।[१] इसके अतिरिक्त छत्रशाल और भगवंतराय समकालीन भी थे तथा सहयोगी भी । अत: इतनी बातों को सामने रखकर कहा जा सकता है कि इन दोनों के सम्पर्क में आने वाले ' नेवाज ' यदि एक ही व्यक्ति रहे हों तो आश्चर्य नहीं ।

यहां यह बात भी ध्यान में रखनी होगी कि नेवाज और छत्रशाल का सम्बंध परवर्ती काल में ही घटित हुआ होगा । तभी भगवत कवि के पश्चात उनका छत्रशाल के यहां पहुंचना बताया जाता है ।[१] छत्रशाल विरुदावली के जो कुछ छंद प्रचलित हैं उनसे भी पुष्ट होता है कि नेवाज कवि यहां काफी बाद से पहुंचे होंगे । इतने बाद को कि छत्रशाल की वीरता की धाक जम चुकी थी । उधर परवर्ती काल में भगवंतराय और छत्रशाल दोनों ही अत्यंत निकट थे अत: एक ही कवि दोनों के सम्पर्क में आ गया हो और दोनों में ही अपने अन्तर्निहित भावों की सिद्धि देखकर वह दोनों के प्रति अपने हृदय को निवेदित करता रहा हो तो यह एक दूरारूढ़ कल्पना न मानी जानी चाहिए । अत: भगवंतराय और छत्रशाल के सम्पर्क में रहने वाले नेवाज को इस समय एक ही मानना उचित समझते हैं जो प्रथम नेवाज से भिन्न थे । तीसरे नेवाज कवि जिन्होंने अखरावती की रचना की है, एक साधु थे । उनकी रुचि आध्यात्मिक विषयों में थी । पर यह असंभव नहीं कि इन दोनों संरक्षकों के दरबारों में रहने वाले दूसरे नेवाज कवि ही अंत काल में साधु एवं अध्यात्मनिष्ठ हो गए हों । तीव्र धर्म-भावना के कारण उस युग के वातावरण में जो उद्वेग विधर्मी को नष्ट करने के लिए हो सकता था वही यौवन के उत्साह के समाप्त होने पर अथवा असफलता या निराशा के ही मिलते रहने पर एक दूसरी ही दिशा में मुड़ सकता था जिसके परिणाम स्वरूप व्यक्ति में विरक्ति अथवा अध्यात्म रुचि प्रकट हो सकती है । इसी दृष्टि से दूसरे नेवाज कवि और अखरावती के रचनाकार तीसरे नेवाज कवि के अभिन्नत्व

१- नेवाज कवि का छत्रशाल के लिए लिखा ' दाढ़ी के रखैयन की दाढ़ी सी जरत छाती ' प्रतीक वाला छंद और भगवंतराय के यहां लिखे छंद की पंक्ति ' जवन दयंतन के जोम को मिटाइबे को निरखी नेवाज तोमे कौंध की कला सी है ' इस प्रसंग में विचारणीय हैं ।

२- ' भली आजु कलि करत हो, छत्रशाल महराज
जहं भगवत गीता पढ़ी तहं कवि पढ़त नेवाज ' मिश्र०भाग-२ पृ० ३१७ में उद्धृत

को अनुमानित करने वाली इस कल्पना को सामने रखा जा रहा है । यहां हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों की दी हुई सूचना भी इस प्रसंग में आवश्यक रूप से विचारणीय है । इतिहास के अनुसार पहले नेवाज जो शकुंतला के रचयिता हैं अंतर्वेद के निवासी थे[1]; दूसरे बुंदेलखंड के थे[2] जिन्होंने " अखरावती " लिखा है तीसरे बिलग्राम के जुलहा थे ।[3] परन्तु इस निर्णय के लिए आधार कौन सा ग्रहण किया गया है यह कुछ भी स्पष्ट नहीं । संभवत: आश्रयदाताओं के सम्बंध के अनुसार अनुमान कर ही सहारा लिया गया है । इसलिए भगवंतराय से सम्बंधित नेवाज कवि का निराकरण करना आवश्यक हो जाता है ।

भगवंतराय से संबंधित नेवाज कवि का परिचय

भगवंतराय से संबंधित नेवाज कवि के सम्बंध में इतना ही कह सकते हैं कि वे शकुंतला के रचयिता नेवाज से भिन्न थे । संभव है वे और छत्रशाल के यहां रहने वाले नेवाज एक ही व्यक्ति रहे हों । इस सम्बंधानुमान के कुछ संकेतों की चर्चा पिछली पंक्तियों में हम कर चुके हैं । इतना ही नहीं यह भी संभव हो सकता है कि इन्हीं दूसरे नेवाज कवि ने परवर्ती काल में चैतन्य सम्प्रदाय में दीक्षा ले ली हो और स्वयं अखरावती की रचना भी की हो ।[4] यहां नेवाज नाम से भी इस अनुमान की पुष्टि में थोड़ा बल मिल जाता है । नेवाज नाम हिन्दुओं में प्रचलित नहीं अत: एक साथ अनेक नेवाज कवियों की कल्पना से संदेह उत्पन्न होता है । फिर कोई साधु अपना नाम नेवाज क्यों रखता ? साधुओं में तो यह नाम अप्रिय भी हो सकता है । अत: बहुत संभव है जिन महाशय ने नेवाज नाम से कवि कीर्ति अर्जित की थी वे ही साधु हो जाने के बाद भी न तो कविता से मुख मोड़ सके और न पूर्व अर्जित कीर्ति को नाम बदल कर विसर्जित ही करना चाहा । मनुष्य

१- हि० इतिहास० पृ० ३१७, परन्तु मिश्र २-पृ० ४६४ में छत्रशाल के यहां रहने वाले नेवाज को ही शकुंतला का लेखक माना गया है ।

२- मिश्र०-२ पृ० ७०२

३- मिश्र०-२ पृ० ७७८

४- खोज० १६०६, कवि संख्या २१७

की स्वाभाविक कमजोरियां तो उसके भीतर हर दशा में छिपी ही रहती हैं अत: यह अनुमान उपेक्षणीय नहीं ।

इस प्रकार हम मान सकते हैं कि आलोच्य नेवाज कवि छत्रशाल के आश्रित थे । यहीं से वे भगवंतराय के सम्पर्क में आये । इसके पश्चात् अपने इन दोनों प्रमुख आश्रयदाताओं का निधन होने पर साधु होकर अध्यात्म एवं ईश-चर्चा की ओर अपनी कविता के प्रवाह को मोड़ दिया, इसी के परिणाम स्वरूप अखरावती की रचना हुई । यही रचना कवि की अंतिम रचना थी । जिसके पश्चात् का उनका जीवन और कृतित्व अंधकार में है ।

भूधर

(कवि परिचय)

<u>भूधर नामधारी चार कवि</u> : शिवसिंह सेंगर ने भूधर नाम के दो कवि लिखे हैं जिनमें एक भगवंतराय के आश्रित थे ।[1] मिश्र बंधुओंने भूधर नाम के चार कवि गिनाये हैं । ये चारों समकालीन सिद्ध होते हैं । इनमें से तीन जैन मतावलम्बी हैं जिनमें से एक का समय मिश्रबंधु में संवत् १७७१ और दो का संवत् १७८१ माना है ।[2] भगवंतराय के यहां रहने वाले का समय संवत् १८०६ लिखा है ।[3] पर उसे वास्तवमें संवत् १७९२ मानना ठीक होगा ।

इस प्रकार ये भूधर नामधारी कवि समकालीन सिद्ध होते हैं । यह ध्यान में रखना होगा कि मिश्र बंधुओं के तीन भूधर कवि जैन मतावलम्बी हैं । उनके ग्रन्थों से यह भली भांति प्रमाणित है । बहुत संभव है ये तीनों एक ही कवि रहे हों । मिश्र बंधुओं ने इन्हें पृथक् पृथक व्यक्ति मानने का कोई कारण नहीं दिया है अत: बहुत अधिक विश्वसनीय नहीं है ।

१- सरोज०

२- मिश्र०-२, पृ० ५६८; ६१६; ८६०

३- मिश्र०-२, पृ० ६८४

इनमें से दो के लिए वे लिखते भी हैं कि ` ये आगरा के निवासी थे ` शाहगंज, आगरा के निवासी थे ` । इस प्रकार के कथन में पर्याप्त भ्रम का सन्निवेश मालूम पड़ता है । इन सब जैन कवियों की रचनाओं में काव्योत्कर्ष अधिक नहीं है, यदि है भी तो वह यत्र तत्र है । खोज रिपोर्टों में जितने अंश हमने पढ़े हैं उन्हीं के आधार पर यह धारणा बनी है।

भगवंतराय से सम्बंधित भूधर कवि का परिचय : अब प्रश्न उठता है कि भगवंतराय से संबंधित भूधर कवि कौन थे ? समय को देखते हुए यह संदेह हो सकता है कि संभव है इन्हीं तीन जैन भूधर कवियों में से कोई भी व्यक्ति उनके यहां रहता रहा हो ।

परन्तु यह बात सहसा मानने योग्य नहीं है । संग्रह-ग्रन्थों में भूधर के जो दो चार छंद रीतिकालीन वातावरण के प्रतिनिधि स्वरूप संकलित हैं वे विरक्त जैन साधु की लेखनी से शायद ही प्रसूत हुए होंगे । इस प्रकार भगवंतराय के निधन-काल में शोकोद्रेक रूप से लिखे गये छन्द तथा रीतिकालीन कविता-शैली के छन्द एक दूसरे कवि केमाने जाने चाहिए जो जैन नहीं था । मिश्र बंधुओं ने भी इसी आधारपर भगवंतराय के आश्रित कवि को अलग किया है ।[१] हमारी इस धारणा की पुष्टि बड़ौदा विश्वविद्यालय के प्रोफेसर कुंवर श्री चन्द्र प्रकाश सिंह द्वारा खोजी गई भूधर कवि की `ध्यान बत्तीसी ` नामक रचना से हो जाती है । ` ध्यान बत्तीसी ` ३२ छंदों की अत्यंत सुष्ठु रचना है । कृष्ण के प्रति कवि के ध्यान या कहें तन्मयता की दशा के ये छंद परिचायक हैं । ध्यान बत्तीसी का एक छंद उदाहरण स्वरूप यहां प्रस्तुत करना अनुपयुक्त न होगा -

तैसिये लटक मोर चन्द्रिका चटक सोहै
कुंडल झलक अलकनि की कपोल में
तैसिये चिलक चारु तिलक सभाग भाल
गरे मुक्तमाल गुंजमाल चखलोल में

१- तुलना कीजिये मिश्र०-२, पृ० ६८४

तैसिये दमक औ चमक पीति पटतट
कटि काछनीन काछे रुचिरति चोल में
माई नंदलाल की अनूप छवि वाल देखि,
पार वार कल्लैनी मोल हू अमोल में ।
' ध्यान बत्तीसी '

इस प्रकार यह तो मानना ही पड़ता है कि जैन भूधर कवि के समकालीन ही कोई हिन्दू भूधर कवि भी थे । संभवत: भगवंतराय के यहां रहने वाले ये ही भूधर कवि होंगे । इनकी रचना प्रौढ़ता भगवंतराय के यहां रहने वाले भूधर कवि से बहुत अधिक समता प्रकट करती है । भगवंतराय के निधन पर लिखा गया यह कवित्त यहां दृष्टव्य है -

दान गयो दुनी से गुमान पुर वासिन को
गुनिन के गांठिन सों मानिक छूटिगो
जूझे भगवंत जू के धरम धरासों गयो
सूर्य के सिंगारन से सेत ऐसो फूटिगो
भूधर भनत याही हूक होत हिए माहिं
कवि कविताई करिबे से मन छुटिगो
जाचक की मंशा को पूर अब कौन करे
जो तो हतो भूमें कल्पद्रुमसो टूटिगो '
भूधर

ये भूधर कवि भगवंतराय के समकालीन और उनके अत्यंत घनिष्ठ रहे होंगे, ऐसा उनकी रचनाओं से विदित होता है । इससे अधिक इनके सम्बंध में कुछ भी नहीं ज्ञात है। कवि ने ध्यान बत्तीसी में भी अपने संबंध में कुछ नहीं लिखा है ।

चतुरेश

(कवि परिचय)

चतुरेश कवि का नाम इन पंक्तियों के पूर्व प्रकाश में नहीं आया । इनका जन्म स्थान असोथर था । ये जाति के भाट तथा भगवंतराय के आश्रित व समकालीन थे । आजकल

इनके परिवार के लोग असोथर में नहीं हैं । संभव है कहीं अन्यत्र जाकर बस गए हों । भगवंतराय के अंतिम युद्ध को लेकर लिखे गए इनके कुछ छंद असोथर में ही मिले हैं । एक छंद में इन्होंने अपना परिचय भी दे दिया है :

आठकोस असनि मिटौरा है नवें कोस
पांचकोस किसुनपुर एकडला के पास है
तीस कोस कानपुर फतुहाबाद बारा कोस
बीस कोस चित्रकूट जहां राम दास हैं
तीस कोस प्रागराज काशी है साठकोस
डेढ़ कोस सूर्य सुता करत पाप नास है
खीची भगवंत भूप मेरो चतुरेश नाम
गाजीपुर परगना असोथर में वास है '

इनका कविता-काल संवत् १७६२ के आसपास मानना ठीक होगा । इनके उपलब्ध छन्दों के आधार पर कहा जा सकता है कि इन्होंने भगवंतराय के अंतिम युद्ध का विस्तार के साथ वर्णन किया था । इनकी अन्य रचनाओं के सम्बंध में कुछ नहीं ज्ञात हो सका है ।

मल्ल

(कवि परिचय)

मल्ल कवि के हमें दो छंद मिले हैं जो उन्होंने भगवंतराय के विषय में लिखे थे । इन्हीं के आधार पर यह प्रमाणित होता है कि ये भगवंतराय के आश्रित थे । इनके परिचय में मिश्रबंधुओंने लिखा है - '.......भगवंतराय असोथर वाले के यहां थे । ये महाशय तोष कवि की श्रेणी के कवि थे । याज्ञिक दोहासार नामक पुस्तक के आधार पर इस कवि का समय १७२० के लगभग मानते हैं ।'[१] मिश्र बंधुओं ने १७२० के आगे सन्,संवत नहीं

१- मिश्र० भाग-२, पृ० ६८३

लिखा है । संवत् तो ठीक नहीं जान पड़ता क्योंकि भगवंतराय का निधन संवत् १७६२ में हुआ था । अत: इनका कविता काल संवत् १७६२ के आसपास मानना ही ठीक होगा। इसके सिवा इनके सम्बंध में कुछ भी ज्ञात नहीं है ।

भगवंतराय के प्रति लिखा गया यह कवित्त इनकी काव्यशक्ति का परिचय भी देता है :

आजु महा दानिन को सूखिगो दया को सिन्धु
आजु ही गरीबन कोसब पथ लूटिगो ।
आज दुजराजन को सकल अकाजु भयो
आजु महराजन को धीरज हू छूटिगो ।
मल्ल कहैं आजु सब मंगन अनाथ भये,
आजु ही अनाथन को करम सो फूटिगो ।
भूप भगवंत सुरधाम को पयान कियो
आज कवि गननको कलपतरू टूटिगो ।

सारंग

(कवि परिचय)

सारंग नामक कवि भगवंतराय के यहां थे । इसका उल्लेख फतेहपुर जिले के गजेटियर में भी है । इन्हें गजेटियर में असोथर का कवि कहा गयाहै । परन्तु असोथर वालों को इन के बारे में कुछ भी अब ज्ञात नहीं है ।

इनका भगवंतराय के सम्बंधों को प्रकट करने वाला जो छंद प्राप्त होता है वह भवानीसिंह की वीरता का उल्लेख करता है । इस आधार पर यह भ्रम न हो कि ये भवानी सिंह के आश्रित थे, इसलिए यह स्पष्ट कर देना प्रासंगिक होगा कि भवानीसिंह भगवंतराय के भतीजे और उनके दाहिने हाथ के समान थे । गोपाल, मुहम्मद आदि प्राय: सभी कवियों ने उनकी वीरता का मार्मिक चित्रण किया है, अत: हमारे विचार से सारंग को भी भगवंतराय का आश्रित कवि मानना ठीक होगा । सारंग कवि के सम्बंध में इससे अधिक कोई जानकारी नहीं है । इनका छंद यहां उदाहरणरूप में देना ठीक होगा :

तंगन समेत कारि विहित मंतगन सो
　　　　रुधिर सों रंग रण मंडल में भरिगो
सारंग सुकवि मनै भूपति भवानी सिंह
　　　　पारथ समान महाभारत सो करिगो
मारे देखि मुगुल तुराब खान ताही समै
　　　　काहू अस न जानी काहू नट सों उचरिगो
वाजीगर कैसी दगावाजी करि,
　　　　हाथी हाथा हाथी ते सहादत उतरिगो

ना० प्र० पत्रिका, भाग-६, अंक ३ संवत १६८२

अन्य कवि

इन कवियों के अतिरिक्त भगवंतराय के मंडल में हेम, कंठ, इन्द्र, नाथ और श्यामलाल भी आते हैं। हेम और कंठ के ` भगवंतराय ` के सम्बंध में लिखे छंद भी मिलते हैं। अत: भगवंतराय के साथ इन दोनों का सम्बंध निर्विवाद है। ये कवि साधारण प्रतिभा के थे। इनकी लिखी हुई अन्य कोई सामग्री नहीं मिलती अत:इनके बारे में कुछ भी कह सकने में असमर्थता है। तीसरे कवि श्यामलाल का भगवंतराय को संबोधित करके लिखा गया एक भी छंद नहीं मिला। परन्तु ` शिवसिंह सरोज ` फतेहपुर गजेटियर व स्थानीय अनुश्रुतियों में इनका और भगवंतराय का सम्बंध सिद्ध होता है। असोथर के कुछ पुराने लोगों ने यह भी बताया कि इनके छंद भी पहले कुछ लोगों को स्मरण थे परअब वे किसी की स्मृति में नहीं रहे। सूदन के ` सुजान चरित ` में श्यामलालकवि का नाम मिलता है। अत: ये सूदन तथा भगवंतराय के समकालीन सिद्ध होते हैं। इस प्रकार इनको भगवंतराय का समकालीन मानकर उनका आश्रित समझना समीचीन होगा।